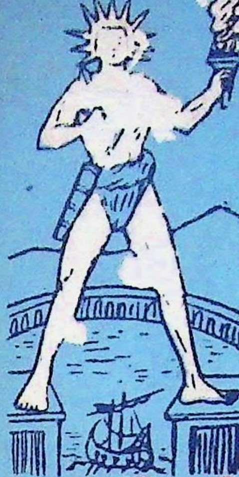
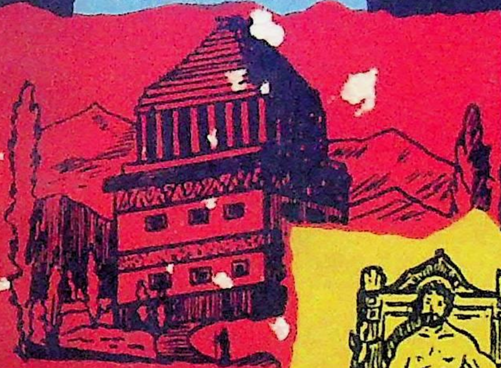


संसार के सात महान आश्चर्यों की कहानी





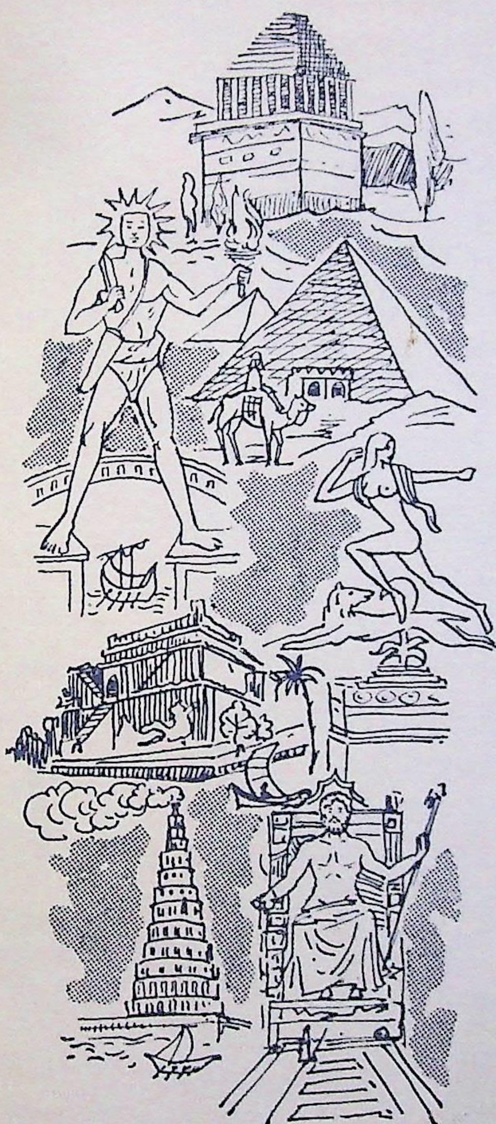


जितेन्द्रकुमार मित्तल





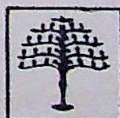




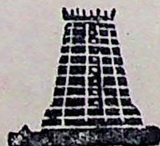
जितेन्द्रकुमार मित्तल

संसार के सात महान आश्चर्यों की कहानी

[भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत]



राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली



मूल्य : दो रुपये

तीसरा संस्करण : 1970

SANSAR KE SAT MAHAN ASHCHARYON KI KAHANI by Jitendra Kumar Mittal 2·00

दो शब्द

दुनिया के सात आश्चर्यों के नाम तो आज सभी जानते हैं, लेकिन उन्हें कब और कहां बनवाया गया, किसने उन्हें बनवाया और आखिर क्यों बनवाया—ये कुछ ऐसे सवाल हैं जिनके जवाब आज बहुत कम लोग जानते हैं। हिन्दी में इन आश्चर्यों के ऊपर कोई प्रामाणिक पुस्तक हमारे देखने में नहीं आई और जो एक-आध किताब मिलती भी है उसमें इन आश्चर्यों की कहानी को इतना कपोल-कल्पित बना दिया गया है कि सहज ही उनपर विश्वास नहीं किया जा सकता। यहां पर हमारा उद्देश्य इन महान् आश्चर्यों के पीछे छिपी हुई कहानियों को सही तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत करना रहा है। ये कहानियां अपने-आप में काफी चमत्कारपूर्ण और दिलचस्प तो हैं ही, साथ ही इनके पढ़ने से आपको उस देश के उस समय के इतिहास का भी पता चल जाएगा, जहां पर कभी ये आश्चर्य खड़े थे। इन आश्चर्यों के बारे में आधुनिक विद्वानों ने जो निष्कर्ष निकाले हैं उन्हें भी यथास्थान दिया गया है। कहानियों को दिलचस्प बनाने के लिए कल्पना का सहारा बिलकुल नहीं लिया गया है।

यहां पर यह सवाल उठ सकता है कि आखिर आश्चर्यों की संख्या को सात तक ही क्यों सीमित रखा गया और सात आश्चर्यों की यह सूची किसने बनाई? इस बारे में भी एक कहानी है। ईसा की मृत्यु से करीब दो सौ साल पहले फिलिस्तीन के सिडौन नामक नगर में एण्टीपेटर नाम का एक विद्वान् रहता था। उसने एक ऐसी किताब लिखी थी जिसमें दुनिया-भर के उन खास-खास स्थानों का ज़िक्र था जिन्हें यात्रियों को देखना चाहिए। ये स्थान जिस-जिस चीज़ के लिए मशहूर थे उनका उल्लेख भी उसने अपनी पुस्तक में किया था। हालांकि ऐसी पुस्तकें उससे पहले भी कई विद्वान् लिख चुके थे तथापि उसने अपनी पुस्तक में ही सबसे पहले दुनिया के इन सात आश्चर्यों का ज़िक्र किया था। बाद में उसीकी पुस्तक के आधार पर अन्य विद्वानों ने भी इन आश्चर्यों का ज़िक्र किया और यह एक प्रामाणिक सूची बन गई। एण्टीपेटर ने दुनिया के आश्चर्यों को सात तक ही सीमित रखने में बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया था। उसपर किसी प्रकार के भेदभाव का आरोप भी नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि उसने किसी एक देश के आश्चर्यों को ही अपनी सूची में शामिल नहीं किया था। इन आश्चर्यों में करीब तीन हज़ार सालों का इतिहास छिपा हुआ है। इनमें से एक यूरोप में था, जब कि एथेन्स और रोम की संस्कृति अपने ऊंचे शिखर पर थी। इसके अलावा दो आश्चर्य एशिया में थे, तीन अफ्रीका में और एक समुद्र में एक द्वीप पर बनवाया गया था।

—जितेन्द्रकुमार मित्तल

क्रम



१

मिस्र के पिरामिड

जिनसे मौत भी डरती है

दुनिया के सात महान् आश्चर्यों में सिर्फ मिस्र के पिरामिड ही ऐसे हैं जो आज भी सिर उठाए खड़े हैं। बाकी सभी आश्चर्य तो समय की काली पर्त के नीचे दब गए और अब उनकी कहानी ही हमारे सामने रह गई है, ऐसी कहानी जो आज भी उन आश्चर्यों को अमर बनाए हुए है।

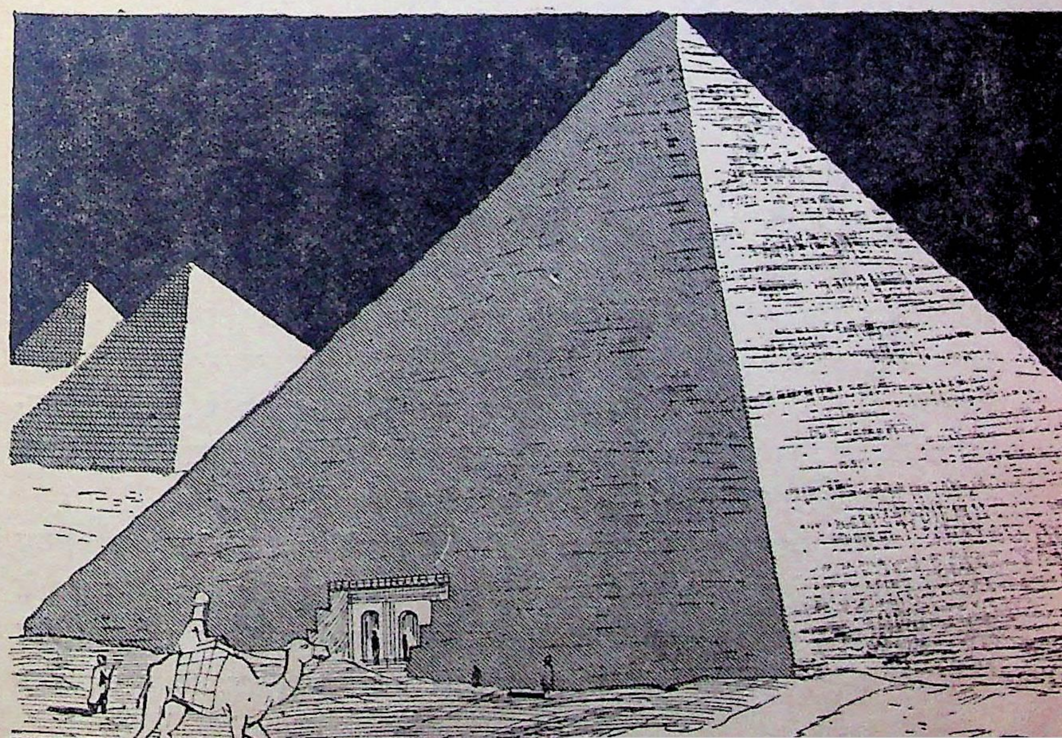
पिरामिडों की कहानी करीब पांच हजार साल पुरानी है। आज तो हम यह मानते हैं कि आदमी की एक ही आत्मा होती है, लेकिन उस समय मिस्र के लोगों का यह विश्वास था कि हर आदमी की पांच आत्माएं होती हैं। इस पांच आत्माओं में से पहली आत्मा को न केवल इस ज़िंदगी में वरन मौत के बाद भी भोजन-पानी की जरूरत पड़ती है। दूसरी आत्मा मौत के बाद पक्षी के रूप में आदमी की कब्र के चारों ओर चक्कर लगाती रहती है और बहुत दिनों बाद मरे हुए शरीर में फिर से प्रवेश कर जाती है, जिससे वह आदमी पुनः जी उठता है—तीसरी आत्मा उसका नाम होता है। चौथी उसकी परछाईं और पांचवीं उसका मरा हुआ शरीर। आदमी का यह फर्ज है कि वह इन पांचों आत्माओं की हिफाजत करे। मिस्र के लोग अपने इसी विश्वास के कारण अक्सर मौत के बाद आदमी के लिए एक सुरक्षित कब्र बनाते थे, जिससे उसका शरीर नष्ट न हो और उसकी दूसरी आत्मा, जो उसकी कब्र के चारों ओर पक्षी के रूप में चक्कर लगाती रहती है, कभी भी उसके शरीर में प्रवेश कर सके। अगर मौत के बाद शरीर नष्ट हो जाए तो यह दूसरी आत्मा हमेशा-हमेशा के लिए कब्र के चारों तरफ भटकती रहती है। इस कब्र में खाने-पीने

का बहुत-सा सामान, कपड़े वगैरह भी रख दिए जाते थे, जिससे पहली आत्मा, जिसे मरने के बाद भी खाने-पीने की जरूरत होती है, भूखी-प्यासी न रहे। इन आत्माओं की हिफाजत करने के लिए शुरू-शुरू में जो कब्रें बनाई जाती थीं वे बहुत साधारण होती थीं। अक्सर रेत में एक गड्ढा खोदकर लाश को उसमें रख दिया जाता था और उसके पास ही खाने-पीने का कुछ सामान भी रख दिया जाता था। बाद में जैसे-जैसे सभ्यता का विकास हुआ, लोगों ने महसूस किया कि इस तरह कब्र में मरे हुए शरीर को दबाने से वह जल्दी ही नष्ट हो जाता है। अतः लाश को ज्यादा दिनों तक सुरक्षित रखने के लिए पहले तो नमक के मिश्रण में उसे रखा जाने लगा। बाद में ममियां बनाने का रिवाज चला। ममियां किसी ऐसे मसाले से बनाई जाती थीं, जिससे मरा हुआ शरीर हजारों-लाखों साल तक खराब नहीं होता था। कब्रों का आकार भी समय के साथ ही साथ बदलता रहा। पहले रेत में ऐसे ही दबाने के बदले मरे हुए आदमी को ईंटों की कब्र में दफनाया जाने लगा। जैसे-जैसे धन-वैभव में वृद्धि हुई कब्र का रंग-रूप भी बदलता गया और उसने बड़े-बड़े पिरामिडों का रूप ले लिया।

पिरामिडों की इस कहानी के साथ मिस्र के राजा खुफू का नाम खास तौर से जुड़ा हुआ है। खुफू चिआप्स नाम से भी इतिहास में मशहूर है। मिस्र में तीन महान् वंशों के बाद चौथा वंश खुफू के गद्दी पर बैठने से शुरू हुआ। वह कब मिस्र की गद्दी पर बैठा, इस बारे में कुछ निश्चय से नहीं कहा जा सकता। कुछ लोगों का मानना है कि वह ३९६९ से ३९०८ ई० पू० तक मिस्र का बादशाह रहा। इसके विपरीत कुछ दूसरे लोगों का विश्वास है कि उसका जन्म ही २९०० ई० पू० में हुआ था और उसने सिर्फ २३ साल तक ही शासन किया था। जो कुछ भी हो, यह तो विश्वास से कहा जा सकता है कि वह आज से पांच हजार वर्ष पहले ही हुआ था। वह मध्य मिस्र के एक नगर में पैदा हुआ था और राजवंश से उसका कोई सम्बन्ध नहीं था। वह किस तरह मिस्र की गद्दी पर बैठ सका, इस बारे में हमें उस समय के इतिहास से कुछ भी पता नहीं चलता।

गद्दी पर बैठते ही खुफू अर्थात् चिआप्स ने अपनी एक ऐसी मजबूत कब्र बनवाने की बात सोची जो कभी भी नष्ट न हो सके और जिसमें उसका शरीर मौत के बाद भी हमेशा-हमेशा के लिए हिफाजत से रखा रहे ताकि अगर किसी दिन उसकी दूसरी आत्मा उसके शरीर में वापस प्रवेश करना चाहे तो उसे शरीर ज्यों का त्यों मिल सके और वह फिर से जिन्दा हो सके। उस जमाने में चूंकि लोग बहुत-सा धन तथा हीरे-जवाहरात भी मृत शरीर के साथ कब्र में दबाने लगे थे, इस कारण कब्रों में चोरी करनेवालों या कब्र

लूटनेवालों के गिरोह पनपने लगे थे। ये कब्र लूटनेवाले कब्र की सारी धन-दौलत निकालकर शरीर को यों ही खुला छोड़ जाते थे, जिससे वह खराब हो जाता था। बादशाह चिम्राप्स चाहता था कि उसकी कब्र या पिरामिड इतना मजबूत बने कि कब्र लूटनेवाले उसे तोड़-फोड़ न सकें और उसे लूट भी न सकें। नील नदी के पश्चिम में, घाटी से करीब एक सौ फुट की ऊंचाई पर जिस तरफ सूर्य छिपता था, चिम्राप्स ने अपना पिरामिड बनवाने का फैसला किया। पिरामिड बनवाने की तैयारियां जोर-शोर से होने लगीं। चिम्राप्स भगवान् में विश्वास नहीं करता था। वह मानता था कि यह बेकार का विश्वास है और भगवान् की प्रार्थना में समय या पैसा खर्च करना फिजूल है। इसीलिए उसने मिस्र में सभी पुजारियों और साधुओं को यह हुक्म दिया कि वे यह बेकार का काम छोड़कर उसका पिरामिड बनाने का काम करें। बादशाह ने पूरे मिस्र के मन्दिरों को बन्द करवा दिया। ऐसा कहा जाता है कि मिस्र के तीन



लाख लोगों को बादशाह की इच्छा के मुताबिक पिरामिड बनाने का काम करने को मजबूर किया गया था। इन सभी लोगों की एक-एक लाख की तीन टोलियां बनाई गई थीं। हर टोली को लगातार तीन महीने तक काम करना होता। जब एक टोली काम कर रही होती थी तो बाकी की दोनों टोलियां उस काम करनेवाली टोली को भोजन-पानी देतीं तथा उसकी दूसरी जरूरतों का ख्याल रखती थीं। इन लोगों को मजदूरी के बदले कोई पैसा नहीं दिया जाता था। बस, सारे दिन काम करने के बदले में उन्हें रोटी और कपड़ा ही मजदूरी के रूप में मिलता था। आज तो हम इस प्रकार की सामाजिक या राजनीतिक स्थिति की कल्पना भी नहीं कर सकते। आज इस तरह बेगार करवाना तो दूर रहा, मजदूर के साथ कोई बुरा व्यवहार भी नहीं कर सकता। जानते हैं क्यों? उत्तर सीधा-सादा है। आज दुनिया के करीब-करीब सभी मुल्कों से किसी एक तानाशाह बादशाह का राज्य खत्म हो गया है। आज ज्यादातर देशों में देश की जनता खुद शासन चलाती है। दूसरे शब्दों में, आज का युग तो प्रजातन्त्र का युग है न, जिसमें कोई किसीका जन्म से ही मालिक या सेवक नहीं हो सकता।

इस तरह बिना एक पैसा खर्च किए ही बादशाह को मजदूर मिल गए थे, लेकिन फिर भी जिस तरह का विशाल पिरामिड वह बनवाना चाहता था, उसमें लाखों-करोड़ों रुपये खर्च होने थे। आपको यह जानकर ताज्जुब होगा कि आज यह अन्दाजा लगाया जाता है कि अगर ऐसा ही पिरामिड फिर से बनवाना हो तो तमाम आधुनिक तरीकों और मशीनों के बावजूद एक हजार लोगों के पूरे सौ साल तक काम करने के बाद ही खुफू के पिरामिड जैसा पिरामिड बन सकेगा। अब आप खुद ही अन्दाजा लगा सकते हैं कि उस समय में, जब कि आज की तरह मशीनें और समय बचानेवाले तरीके नहीं थे, लोगों ने कितनी मेहनत इसे बनाने में की होगी और इसपर कितना पैसा खर्च हुआ होगा। पिरामिड के शिलालेख के अनुसार काम में लगे मजदूरों की सिर्फ रोटी और प्याज पर ही रोज एक हजार छः सौ दीरम (चांदी का सिक्का) खर्च हो जाती थीं। ऐसा कहा जाता है कि पिरामिड के बनने से बहुत पहले ही बादशाह का खजाना खाली हो गया। उसने पैसा इकट्ठा करने के लिए अपनी जनता पर बहुत अत्याचार किए।

लाल ग्रेनाइट और चूने का पत्थर पिरामिड बनाने के काम में लिया गया। उस रेगिस्तान में भला ऐसा पत्थर कहां से मिलता। यह सारा पत्थर पिरामिड की जगह से सात सौ मील की दूरी पर स्थित सियेन नामक जगह से लाया गया। हजारों-लाखों लोग सिर्फ पत्थर लाने पर ही लगाए गए थे। नील नदी से गीजा पहाड़ी तक, जहां पर पिरामिड

बनाया जा रहा था, पत्थर पहुंचाने के लिए एक सड़क बनाई गई थी। ऐसा माना जाता है कि इस सड़क के बनाने में ही दस बरस लग गए थे। मिस्र के आधुनिक गांव काफ्र के नीचे आज भी इस सड़क के निशान दिखाई देते हैं। पत्थर नदी के रास्ते ही लाए जाते थे। मिस्र में बादशाह के गद्दी पर बैठते ही उसका पिरामिड बनना शुरू हो जाता था और उसके शासन के हर साल उसके पिरामिड की एक सतह और ऊपर चढ़ा दी जाती थी। इस तरह जो बादशाह जितने अधिक समय तक शासन करता था उसका पिरामिड उतना ही ज़्यादा बड़ा होता था। लेकिन खुफू का तो यह विश्वास था कि वह एक लम्बे समय तक शासन करेगा, इसलिए उसने शुरू से ही एक बहुत बड़ा पिरामिड बनवाने का फैसला किया था। यह पिरामिड १३ एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ था। नीचे का आधार बहुत मजबूत बनाया गया था और उसके ऊपर सतह पर सतह उठाई गई थीं। ये सतहें इस तरह उठाई गई थीं कि हर ऊपर वाली सतह नीचे वाली से थोड़ी संकरी थी। इस तरह पिरामिड ऊपर से बिल्कुल ही संकरा हो गया। पत्थरों को इस कारीगरी और खूबसूरती से जोड़ा गया था कि इन जोड़ों का कहीं पता ही नहीं चलता था। जब यह पिरामिड बनकर तैयार हुआ तो इसकी ऊंचाई ४८१ फुट थी। इस समय इसकी कुल ऊंचाई ४५० फुट ही रह गई है, ऊपर से ३१ फुट गायब हो गया है। इसकी चारों दीवारें आधार पर करीब ५१ डिग्री का कोण बनाती हुई हैं। सब चीजें इतनी सावधानी से नाप-जोखकर बनाई गई थीं कि आज भी बारीकी से जांच करने पर उनमें ज़रा-सा अन्तर नज़र नहीं आता। इतनी ऊंचाई तक इतने बड़े-बड़े पत्थर किस तरह ले जाए गए होंगे, यह बात आज भी लोगों के लिए रहस्य ही बनी हुई है। इस पूरे पिरामिड पर कोई ऐसा पॉलिश किया गया था कि दूर से यह शीशे की तरह चमकता था।

जैसा कि पहले भी हम एक जगह जिक्र कर चुके हैं, उस ज़माने में कुछ लोगों ने कब्रों और पिरामिडों को लूटना ही अपना पेशा बना लिया था। इसीलिए चिआप्स ने अपने पिरामिड के अन्दर के कमरे इस तरह बनवाए कि उनमें घुस पाना हरेक के लिए आसान काम न था। इस पिरामिड के अन्दर हवा जाने का इन्तज़ाम किया गया था। हवा के लिए पिरामिड में दो ऐसे छेद किए गए थे कि वे बाहर से दिखाई ही नहीं देते थे। पिरामिड के बीचोंबीच एक बड़ा कमरा है। इस कमरे में खुफू को नहीं दफनाया गया था। असल में यह लुटेरों को धोखा देने के लिए बनाया गया था। जब लुटेरे इस कमरे में पहुंचकर इसे खाली पाते थे तो यह सोचकर वापस लौट जाते थे कि शायद कोई दूसरा लुटेरा उनसे पहले ही इसे लूटकर ले गया। और इस तरह बादशाह की ममी एक दूसरे छोटे कमरे में सुरक्षित

रही। इसी तरह रानी के लिए भी एक नकली कब्रगाह बनाया गया था। बादशाह की ही तरह रानी को भी एक दूसरी छिपी हुई कब्र में लुटेरों से बचाने के लिए दफनाया गया था। इसके अन्दर एक २८ फुट ऊंची गैलरी भी बनी हुई है।

इतनी सारी हिफाज़तों के बावजूद बेचारे खुफू की ममी पिरामिड में सुरक्षित न रह सकी। शायद कोई लुटेरा उसका पता लगाने और पिरामिड की सारी दौलत निकाल सकने में सफल हो गया। इस तरह खुफू का कभी जिन्दा होने का सपना अधूरा ही रह गया। हो सकता है कि आज भी खुफू की दूसरी आत्मा किसी पक्षी के रूप में उसके पिरामिड के चारों ओर चक्कर लगाती हो। कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि चूंकि खुफू ने अपनी जनता पर बहुत अत्याचार किए थे इसलिए उसकी मौत के बाद उसे पिरामिड में दफनाया ही नहीं गया। मिस्र में यह किस्सा भी प्रचलित है कि आज भी इस पिरामिड में एक ऐसा गुप्त कमरा है जिसका पता आज तक कोई भी नहीं लगा सका है और इसमें बादशाह खुफू की ममी अभी भी शान्ति से सोई हुई है, इस आशा के साथ कि किसी दिन उसकी दूसरी आत्मा शरीर में वापस आ जाएगी।

असल में बादशाह खुफू की मौत और उसके दफनाए जाने के बारे में इतिहास चुप है। फिर भी यही सही माना जाता है कि खुफू के शरीर की प्रचलित रिवाज के मुताबिक ममी बनाई गई थी और उसे पिरामिड में रखा गया था। उसके साथ बहुत-सा साज-सामान तथा धन भी वहां रखा गया था। बाद में पिरामिड का रास्ता एक बहुत भारी ग्रेनाइट के पत्थर से हमेशा के लिए बन्द कर दिया गया था। उसके पिरामिड की रक्षा के लिए काफी दिनों तक एक सेना की टुकड़ी वहां पड़ी रहती थी।

खुफू की मृत्यु के बाद उसका लड़का खैफ्रे मिस्र की गद्दी पर बैठा। उसने अपने पिता की ही तरह एक पिरामिड अपने लिए बनवाया। उसका पिरामिड खुफू के पिरामिड के पास ही है और वह उससे छोटा भी है। खैफ्रे के बाद अगले बादशाह मेनकारे ने भी इन दोनों पिरामिडों के पास ही अपना तीसरा पिरामिड बनवाया, जो पहले वाले दोनों पिरामिडों से छोटा था। इन्हीं पिरामिडों के बीच में खड़ी थी फीनिक्स की विशाल पत्थर की मूर्ति, जिसका धड़ शेर का था और सर खैफ्रे का। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि इसका सर खुफू का था।

शताब्दियां बीतती गईं, लेकिन ये पिरामिड सर उठाए खड़े रहे। लाखों सालों का मिस्री इतिहास समाप्त हो गया। यूनान और रोम का उदय हुआ और उनका पतन भी हो गया। फिर भी महान् पिरामिड उसी मजबूती से खड़े रहे जैसे कि वे अपने बनने के समय

थे। मक्का में मुहम्मद साहब का जन्म हुआ और अरबों की सेनाएं पूरे पूरब में फैल गईं। ६३९ में अरब सेनापति अमर ने मिस्र को जीत लिया। इसके तीन साल बाद, ६४२ में काहिरा नगर बसाया गया। अरब लोग नये-नये महल बनवाना चाहते थे, उनके लिए उन्हें पत्थरों तथा दूसरे इमारती सामान की जरूरत थी। उन्होंने सोचा कि क्यों न पिरामिडों को तोड़कर उनके पत्थरों से नई इमारतें बनवाई जाएं। यह सोचकर उन्होंने पिरामिडों को तोड़ना भी चाहा, लेकिन उन्हें इसमें सफलता नहीं मिली। ८१३ में मैमुन अरबों का खलीफा बना। वह सन् ८२० में मिस्र चला आया और अपने शासन के आखिरी समय में ज्यादातर वह यहीं रहा। पिरामिडों की अजीबोगरीब कहानियां उड़ते-उड़ते उसके कानों में भी पहुंचीं। उसे बताया गया कि इनके अन्दर बहुत-सा खजाना छिपा हुआ है और इस खजाने की हिफाजत के लिए इसके अन्दर एक बहुत बड़ा अजगर रहता है। जो लोग भी इस खजाने को लेने के लिए अन्दर गए उन्हें ही अजगर चट कर गया। हालांकि मैमुन को इन कहानियों पर कम ही भरोसा था, फिर भी उसके मन में इस बात को जानने की तीव्र इच्छा पैदा हो गई कि आखिर इन रहस्यमय पिरामिडों के अन्दर है क्या? उस समय तक शायद पिरामिडों के अन्दर जाने का रास्ता लोग भूल गए थे। मैमुन ने कुछ आदमियों को लगाकर खुफू के पिरामिड में छेद करने को कहा। ५०० फुट तक खोदने पर उन्हें कोई रास्ता नजर नहीं आया और उन लोगों ने करीब-करीब यह मान लिया था कि यह अन्दर से ठोस है, लेकिन तभी उन्हें अन्दर किसी पत्थर के गिरने की आवाज सुनाई दी। इससे उन्हें विश्वास हुआ कि पिरामिड ठोस नहीं है और इसके अन्दर कमरे बने हुए हैं। अब उन्होंने उसी तरफ को खोदना शुरू किया जिधर से पत्थर गिरने की आवाज आई थी। आखिर में रास्ता मिल ही गया। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि जब लोग पिरामिड के अन्दर घुसे और अन्दर जाकर उन्होंने देखा कि वहां कोई खजाना नहीं है तो उन्होंने मैमुन से इस बात की शिकायत की और कहा कि हमारी मेहनत बेकार गई। इसपर मैमुन ने उन लोगों को खुश करने के लिए कुछ सोना पिरामिड में छिपा दिया, जिसे पाकर उसके आदमी खुश हुए। ऐसा भी कहते हैं कि जब मैमुन बादशाह के कमरे में पहुंचा तो उसने एक खोखला पत्थर देखा, जिसमें एक आदमी की प्रतिमा रखी हुई थी। इस प्रतिमा के अन्दर एक आदमी का शरीर था। असल में मृत शरीर के ऊपर सोने और मसाले का प्रयोग करके ही यह प्रतिमा बनाई गई थी, जिसे ममी भी कहा जाता है। उसके पास ही एक विशाल तलवार पड़ी हुई थी। यह कहानी कहां तक अरबों की गढ़ी हुई है और कहां तक सही है, कुछ नहीं कहा जा सकता। वैसे एक विद्वान का दावा है कि सन्

११३३ में उसने काहिरा में उस ममी का खोल देखा था जो मैमुन को पिरामिड में से मिला था। शायद मैमुन के समय से ही पिरामिडों के अन्दर जाने का रास्ता सबको मालूम हो गया।

आधुनिक विद्वान् पिरामिडों से और भी बहुत-सी बातें जोड़ने की कोशिश करते हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि ये बादशाहों की कब्रें नहीं हैं, वरन् नक्षत्रों का अध्ययन करने के लिए बनाई गई वेधशालाएं थीं। उस ज़माने में मिस्रवासी नक्षत्रशास्त्र के अपने ज्ञान के लिए सारी दुनिया में मशहूर थे, शायद इसी कारण यह अनुमान लगाया गया है। इन विद्वानों का मानना है कि इन पिरामिडों के ऊपर तक जाने का रास्ता था और वहां से नक्षत्रों का अध्ययन किया जाता था। लेकिन इस बात के सही होने के प्रमाण नहीं मिलते।

पिरामिडों के साथ मुस्लिमों की एक कहानी और जुड़ी हुई है। यह शुरू में ही बता देना ठीक होगा कि यह कहानी भी मनगढ़न्त है। कहानी इस प्रकार है कि एक बार मिस्र में बहुत ज़बर्दस्त बाढ़ आने से तीन सौ साल पहले ही बादशाह सौराद को यह सपना दिखाई दिया कि आसमान के सारे तारे टूटकर गिर गए हैं और यह धरती अन्दर को धंस गई है। फिर एक साल बाद बादशाह को सपना दिखाई दिया कि जैसे ही तारे धरती पर गिरे वे सफेद चिड़ियों में बदल गए। ये चिड़ियां आदमियों को उठा-उठाकर दूर ले जाने लगीं। बादशाह ने अपने सपने का मतलब समझने के लिए बड़े-बड़े ज्योतिषियों को बुलाया। ज्योतिषियों ने सोच-समझकर बताया कि यह सपना भविष्य में आने वाले किसी प्राकृतिक संकट की सूचना देता है। यह सुनकर बादशाह ने पिरामिड बनवाए, जिससे कि उनके अन्दर जनता का धन, राजा का शरीर, ज्ञान-विज्ञान की चीज़ें तथा कला सुरक्षित रह सके।

मिस्र में करीब ७५ पिरामिड हैं। ये पिरामिड अपने-आपमें दुनिया के लिए आश्चर्य तो हैं ही, लेकिन इनका महत्त्व एक दूसरी दृष्टि से भी है। ये इस मायने में भी कुछ कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं कि इनके द्वारा उस ज़माने की कला, संस्कृति और इतिहास जिन्दा रह सका है। पुरातत्त्ववेत्ताओं ने मिस्र का इतिहास जानने के लिए इन पिरामिडों के आसपास खुदाई भी की थी, इनमें मिस्र के १८ वर्षीय शासक तूतांखामेन का मकबरा भी मिला। तूतांखामेन ने मिस्र में १३,५०० ई०पू० में शासन किया था। इसी तरह के और भी कई गुप्त मकबरे ज़मीन के अन्दर मिले, जिनका रास्ता एक-दूसरे से मिलता था और उनके दरवाज़े बन्द थे। इनमें मिस्र की पुरानी कला और संस्कृति के बेशकीमती नमूने मिले हैं। पिरामिडों से मिली ममियां तथा कला के दूसरे नमूने आज मिस्र के संग्रहालय में हिफाज़त से रख दिए गए हैं।



२

बेबीलोनिया के झूलते हुए बगीचे

जो कि साहस और सौन्दर्य के अमर प्रतीक हैं

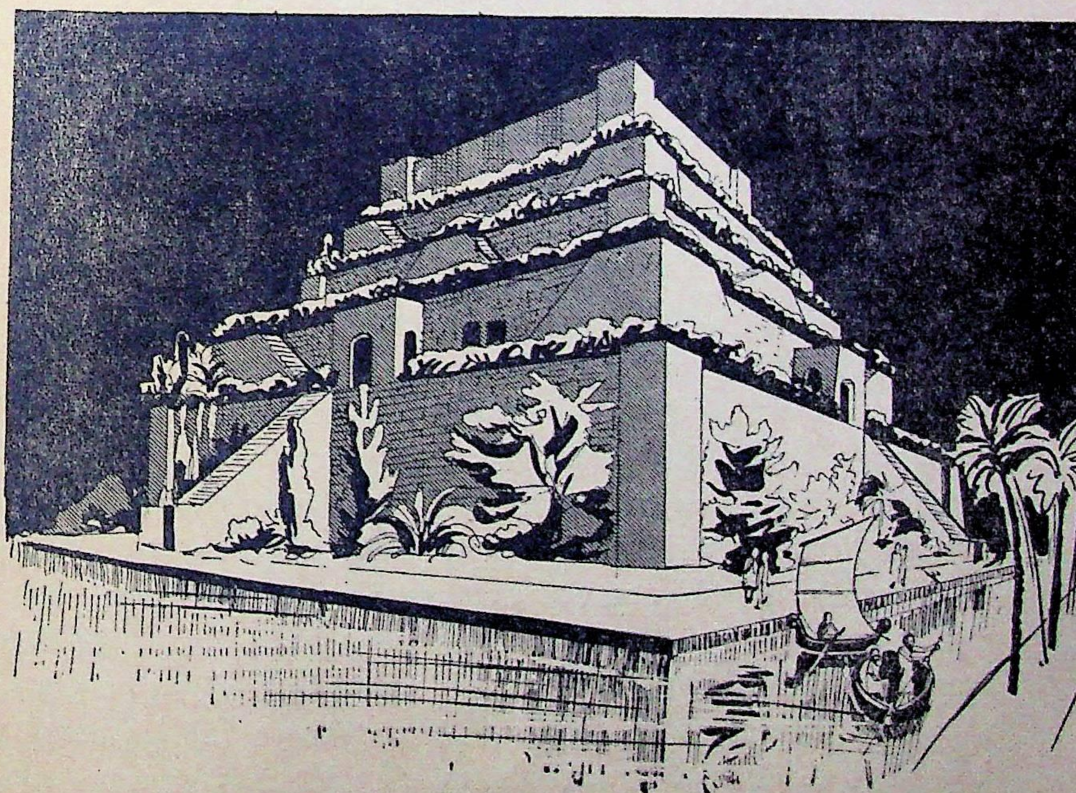
बेबीलोन बेबीलोनिया का एक बहुत पुराना नगर था। एक हीब्रू परम्परा के अनुसार यह दुनिया का सबसे पुराना नगर था, लेकिन इतिहास से यह पता चलता है कि बेबीलोन के बसाए जाने से पहले और भी बहुत-से नगर बन और बिगड़ चुके थे। बेबीलोन का मतलब होता है—ईश्वर का दरवाजा। इस नाम से ही पता चल जाता है कि किसी जमाने में बेबीलोन बहुत धार्मिक नगर रहा होगा। ऐसा माना जाता है कि बेबीलोनिया के राजा सरागोन प्रथम ने ३८०० ई० पू० में इस नगर को बसाया था और उसीने इसे यह नाम दिया था। लेकिन उस जमाने में बेबीलोन कुछ झोंपड़ियों के एक छोटे-से गांव से ज्यादा कुछ नहीं था। वहां पर कुछ मन्दिर बने हुए थे, जहां दूर-दूर से लोग पूजा-उपासना के लिए आया करते थे। यह २२५० ई० पू० में ही एक बड़ा नगर बन सका, जब कि महान् शासक हैम्मुराबी ने इसे अपनी राजधानी बनाया। उसी जमाने से बेबीलोनिया के राजाओं का सीरिया के राजाओं से युद्ध चलता रहता था। ६८९ ई० पू० में निनेवा के राजा सिनाचेरिब ने बेबीलोनिया पर हमला कर दिया और उसने बेबीलोन को अपने कब्जे में कर लिया। उसने नगर के मन्दिरों और इमारतों को तोड़-फोड़ डाला और कहा तो यहां तक जाता है कि इस नगर की नींव के पत्थर तक खोद डाले गए थे और उन्हें नदी में बहा दिया गया था। सिनाचेरिब की मृत्यु के बाद उसका लड़का इसारहड्डोन गद्दी पर बैठा। उसने अपने पिता द्वारा उजाड़ दिए गए नगर को फिर से बसाया और उसे अपनी राजधानी बनाया।

इसारहड्डोन की मृत्यु के बाद उसके दो लड़कों में उत्तराधिकार की बात को लेकर झगड़ा हो गया। यह झगड़ा काफी दिनों तक चलता रहा। अन्त में ६२६ ई० पू० में वह महान् सम्राट् बेबीलोनिया को गद्दी पर बैठा जिसने दुनिया-भर के लिए आश्चर्य पैदा करनेवाली विशाल चारदीवारी बेबीलोन में बनवाई और जिसकी वजह से बेबीलोन इतिहास में ही अमर नहीं हो गया वरन् पूरी दुनिया के लोगों को अपनी अमर कहानी के द्वारा आज भी आश्चर्यचकित कर रहा है। यह था नबोपलसार, जिसके महान् पुत्र नेबुचडनेजर ने बाद में अपने पिता के काम को पूरा किया और अपनी रानी को प्रसन्न करने के लिए सुन्दर लटकते हुए बगीचे बेबीलोन में बनवाए।

नबोपलसार ने सबसे पहला यह काम किया कि लगातार लड़ाइयों के कारण उजाड़-सी हो गई नगरी बेबीलोन में नई-नई इमारतें बनवाई और कई मन्दिर बनवाए। वह रोज-रोज के इन हमलों से तंग आ गया था और यह चाहता था कि उसकी खूबसूरत राजधानी बेबीलोन किसी तरह विदेशी हमलावरों से सुरक्षित रखी जा सके। इसी बात को सोचकर उसने बेबीलोन अर्थात् ईश्वर के दरवाजे के चारों रास्ते बन्द करवाने के लिए एक मजबूत तथा विशाल चारदीवारी बनवाने का फैसला किया। अब मुसीबत यह थी कि बेबीलोन के आस-पास कहीं पत्थर नहीं मिलते थे, जिनसे कि एक मजबूत चारदीवारी बनाई जा सके। इस बात का हल भी कारीगरों ने निकाल लिया। उन्होंने पहले एक बहुत गहरी खाई नगर के चारों ओर खोदी और उस खाई से निकली मिट्टी से ईंटें बनाकर दीवार बनाई गई। चारदीवारी पूरी भी न बन पाई थी कि ६०५ ई० पू० में राजा का देहान्त हो गया। अब महान् राजा नेबुचडनेजर बेबीलोन की गद्दी पर बैठा। उसने पिता का काम जारी रखा।

यहां पर नेबुचडनेजर का थोड़ा परिचय देना ठीक रहेगा। वह एक ऐसा महान् शासक था जो अपने राज्य-काल में अपनी जनता के दिल और दिमाग पर बुरी तरह छा गया था और जिसके बारे में तरह-तरह के अनोखे किस्से प्रचलित हो गए थे। उसकी वीरता की धाक तो उसके दुश्मन तक मानते थे। वह शायद बेबीलोनिया का सबसे ज्यादा ताकतवर राजा था। उसने एक पहाड़ी राज्य मीडिया की राजकुमारी से विवाह किया था। उसने अपने पिता के समय में ही मिस्र की सेनाओं को बुरी तरह हराया था और उन्हें एशिया से दूर खदेड़ दिया था। बाद में उसने सीरिया और फिलिस्तीन को भी जीत लिया और अपने राज्य में मिला लिया। ५९७ ई० पू० में उसने जेरूसलम में अपनी सेनाएं भेजीं और यहूदियों

के राजा को बन्दी बनवा लिया। इसके ११ साल बाद उसने हिब्रू लोगों के पवित्र नगर को नष्ट कर दिया और बहुत-से यहूदियों को वह दास बनाकर बेबीलोन ले आया। उसके बाद से यहूदी लोग उसे बहुत नफरत की नजर से देखने लगे। आज भी यहूदी माताएं अपने बच्चों को डराने के लिए नेबुचडनेजर का नाम लेती हैं। इस बात से ही अन्दाज लगाया जा सकता है कि नेबुचडनेजर ने यहूदियों पर कितने अत्याचार किए होंगे। यहूदियों में उसके बारे में आज भी एक कहानी प्रचलित है कि वह अनेक यहूदियों को बेबीलोन ले गया। यहूदियों की पीठ पर रेत की बोरियां रखकर उनका बोझ बढ़ा दिया जाता था और उनसे रेगिस्तान में पैदल चलने को कहा जाता था। इसी तरह के और भी बहुत-से अत्याचार यहूदियों पर किए जाते थे, जिनके कारण सैकड़ों यहूदी बेमौत मारे गए। इन सब पापों के कारण ही नेबुचडनेजर को भगवान् ने दण्ड देने के लिए उसे गाय का बछड़ा बना दिया था



और सात साल तक बछड़े के रूप में ही उसे यहूदियों के उसी पवित्र नगर में घास चरनी पड़ी थी, जिसे उसने उजाड़ दिया था।

नेबुचडनेजर चाहे कैसा भी राजा रहा हो इससे हमें ज्यादा मतलब नहीं है। असल में अपने पिता द्वारा शुरू की गई चारदीवारी को पूरा कराने और अपनी रानी के लिए लटकते हुए बाग लगवाने के दो काम उसने ऐसे कर दिए जिन्होंने उसे पूरे इतिहास में अमर बना दिया। वह चाहे कितना ही क्रूर शासक रहा हो, यह तो मानना ही पड़ेगा कि उसने निर्माण के जितने काम करवाए शायद दुनिया के किसी भी शासक ने उतने निर्माण के काम अपने जीवन-काल में नहीं करवाए होंगे। बेबीलोनिया की खुदाई में कुछ शिला-लेख मिले हैं। उनमें से एक में नेबुचडनेजर ने खुदवाया था कि "मैंने बेबीलोन की विशाल चारदीवारी पूरी की। इस दीवार के बड़े-बड़े दरवाज़ों पर मैंने कांसे के सांड और भयानक अजगर बनवाए। मेरे पिता ने बेबीलोन के लिए ऐसा काम किया जो उनसे पहले किसीने नहीं किया था। उन्होंने नगर की चारदीवारी बनवाने का काम शुरू किया और अपने समय में ही दो तरफ की दीवारें पूरी भी करवा दी थीं। उन्होंने एक गहरी खाई खुदवाई और उससे जो मिट्टी निकली उसकी ईंटें बनवाकर दीवारें बनवाईं। मैंने अपने पिता द्वारा शुरू किए गए काम को पूरा किया और उस चारदीवारी की बाकी दीवारें बनवाईं। मैंने इन दीवारों की नींव बहुत मजबूत करवाई।"

इन दीवारों के बारे में जो भी बातें पुराने इतिहासकारों तथा दूसरे स्रोतों से पता चलती हैं उनके आधार पर कहा जा सकता है कि पहले नगर के चारों ओर बहुत गहरी खाई खोदी गई थी और इस खाई में फरात नदी का पानी भर दिया गया था। फरात नदी बेबीलोन नगर के बीचोंबीच से बहती थी। चूंकि पत्थर बेबीलोन में नहीं मिल सकता था इसलिए खाई से निकली मिट्टी की ईंटें बनाई गईं और उन्हें मजबूत बनाने के लिए आग में पकाया गया। इन ईंटों से ही चारदीवारी बनाई गई। दीवारों के सिरों पर एक-एक कमरे की मजबूत इमारत बनाई गई, जिसमें से होकर चार घोड़ों का रथ आसानी से घूम सकता था। इस चारदीवारी में कई मजबूत और विशाल दरवाजे बनवाए गए थे। फरात नदी के ऊपर भी बहुत मजबूत पुल बनवाया गया और उस पुल के ऊपर चारदीवारी की दीवार मिलाई गई। बाहरी चारदीवारी के अलावा उससे थोड़े फासले पर भीतर की ओर एक और चारदीवारी बनवाई गई थी, यह बाहर वाली चारदीवारी से कम चौड़ी थी। बेबीलोन के चारों तरफ ६० मील लम्बी यह चारदीवारी पूरी दुनिया के लिए एक आश्चर्य की वस्तु

बन गई थी। यह ७५ फुट चौड़ी और ३०० फुट ऊंची थी। इसकी विशालता का अन्दाज इसी बात से लगाया जा सकता है कि इसके ऊपर चार घोड़ों का रथ आसानी से बिना किसी खतरे के दौड़ सकता था।

इस दीवार के बन जाने के बाद अब बेबीलोन को किसी भी बाहरी हमले का खतरा नहीं रहा था। नेबुचडनेजर ने अब कई मन्दिर नगर में बनवाए और अपने पिता के महल के पास ही एक नया महल अपने लिए बनवाया। एक दिन रानी ने राजा से कहा कि बेबीलोन में उसके अपने नगर जैसे बाग-बगीचे नहीं हैं, इसलिए उसका मन यहां नहीं लगता। नेबुचडनेजर की रानी एक पहाड़ी देश की थी। उसकी उदासी को दूर करने के लिए राजा ने बेबीलोन में एक अनोखा लटकता हुआ बगीचा बनवाने का फैसला किया। बड़े-बड़े कारीगर इस काम के लिए लगा दिए गए।

लटकता हुआ बगीचा बनाने के लिए सबसे पहले एक बहुत मजबूत और ठोस इमारत बनाई गई। इस ठोस इमारत के ऊपर दूसरी ठोस मंजिल बनाई गई और इसी तरह की आठ मंजिलें बनाई गईं। ऊपर तक जाने के लिए सीढ़ियां बनाई गई थीं। सबसे ऊपर की मंजिल पर चारों तरफ कच्ची मिट्टी की कच्ची दीवारें बनाई गईं, ताकि उनमें पेड़-पौधों की जड़ें फैल सकें। बीच में भी मिट्टी फैलाई गई और वहां तरह-तरह के सदाबहार पेड़-पौधे लगाए गए। इस बगीचे के बीच में नेबुचडनेजर की रानी सेमिरामिस के लिए एक सुन्दर कमरा बनाया गया था। यह बगीचा इतनी ऊंचाई पर बना हुआ था कि कहते हैं, बहुत दूर-दूर का दृश्य यहां से दिखाई देता था। बगीचा तो बन गया, लेकिन इतनी ऊंचाई पर पानी ले जाना कोई आसान काम नहीं था। यह तो पता नहीं चलता कि इतनी ऊंचाई तक बेबीलोन के कारीगर फरात का पानी कैसे ले गए होंगे, लेकिन इससे इस बात का पता जरूर चलता है कि उस जमाने में भी कितनी ज्यादा तकनीकी तरक्की हो चुकी थी। इस बगीचे में कई फव्वारे भी लगाए गए थे और मीठी आवाज वाली सुन्दर-सुन्दर चिड़ियों के घोंसले भी यहां बनाए गए थे। रानी जब इतनी ऊंचाई पर इस सुन्दर बगीचे के बीचोबीच बैठती होगी तो उसे कितना आनन्द आता होगा, इस बात की तो शायद हम कल्पना भी नहीं कर सकते। कुछ लोग बेबीलोन की दीवार को सात आश्चर्यों में शामिल नहीं करते, वे इस लटकते हुए बगीचे को ही आश्चर्य मानते हैं। कुछ दूसरे लोग ऐसे भी हैं जो बगीचे को उतना महत्त्व नहीं देते जितना कि उसकी चारदीवारी को देते हैं। हमारे ख्याल से बेबीलोन की दोनों चीजें ही दुनिया के किसी दूसरे आश्चर्य से कम नहीं थीं और अपने समय में ये दोनों

ही चीजें दुनिया के लोगों का ध्यान अपनी तरफ खींचती रहीं।

नेबुचडनेजर ने ४३ साल तक बेबीलोनिया में शासन किया। ५६२ ई० पू० में उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद तीन राजा एक के बाद एक गद्दी पर बैठे। इनमें से कोई भी ज्यादा दिनों तक बेबीलोन पर शासन न कर सका। अन्त में बेलशजार के पिता नेबोनिडस गद्दी पर बैठे। उस समय फारस का राजा साइरस एक बड़े साम्राज्य का मालिक बन गया था। उसने मिस्र तक अपना साम्राज्य बढ़ा लिया था। शुरू में साइरस ने बेबीलोन की किलेबन्दी को देखते हुए उसपर हमला न करने का ही फैसला किया था, लेकिन जब बाद में बेबीलोन का राजा मिस्र के राजा से उसके खिलाफ जा मिला तो उसने बेबीलोन को भी अपने कब्जे में करने की ठान ली। ५३८ ई० पू० में बेबीलोन फारस के राजा के हाथ में चला गया।

पुराने जमाने के मशहूर इतिहासकार हिरोडोटस ने बेबीलोन के पतन की कहानी बताते हुए लिखा है कि बेबीलोन से कुछ दूरी पर फारस के राजा साइरस तथा बेबीलोन की सेनाओं के बीच घमासान युद्ध हुआ। इस लड़ाई में साइरस की विशाल सेना के सामने बेबीलोन की सेना की एक न चल सकी। जब और कोई चारा ही न रहा तो बेबीलोन की सेना नगर के भीतर आ गई और चारदीवारी के फाटक बन्द कर दिए गए। कई साल तक घेरा डाले रहने के बाद भी साइरस बेबीलोन के अन्दर नहीं घुस सका। बहुत सोच-विचार के बाद आखिर उसके दिमाग में एक तरकीब आ ही गई। जहां से फरात नदी बेबीलोन नगर में घुसती थी, वहां पर उसने अपने सैनिक तैनात कर दिए और जब नदी का पानी कम हुआ तो पानी के बहाव के साथ ही सैनिक बेबीलोन में घुस गए। अगर बेबीलोनवासियों को फारस के राजा की सेना के इस तरह नगर में घुसने का ज़रा भी अनुमान होता तो वे उनका प्रवेश रोक सकते थे, लेकिन वे तो बेफिक्र थे और सोच रहे थे कि दुश्मन अपने-आप ही परेशान होकर लौट जाएगा, वह अन्दर आने के लिए कुछ नहीं कर सकेगा। इस तरह बेबीलोनवासियों की लापरवाही से विशाल और मजबूत चारदीवारी के बावजूद फारस ने बेबीलोन को अपने अधीन कर लिया।

साइरस ने बेबीलोन में कोई तोड़फोड़ नहीं करवाई, हां बेलशजार को जरूर मौत के घाट उतार दिया गया। फारस के अधीन हो जाने के बाद भी बेबीलोन के लोग अपना जीवन आराम से बिताते रहे। ५२९ ई० पू० में साइरस की मृत्यु हो गई। उसके बाद फिर से बेबीलोन आज़ादी के लिए कोशिश करने लगा और ५२१ ई० पू० में नेबुचड-

नेजर तृतीय के नेतृत्व में वह पूरी तरह आज़ाद हो गया। लेकिन बाद में फारस के एक दूसरे राजा दारियस ने इसे अपने कब्ज़े में कर लिया। कहते हैं कि दारियस ने भी बड़ी चालाकी से बेबीलोन को अपने कब्ज़े में किया था, क्योंकि उस समय तक भी उसकी चारदीवारी अपनी पूरी मज़बूती के साथ खड़ी थी। दारियस ने इस आश्चर्यजनक चारदीवारी की कुछ दीवारें तोड़-फोड़ डाली थीं। कहते हैं कि दारियस के बाद फिर एक बार बेबीलोन में विद्रोह पैदा हो गया और इस बार फारस के एक राजा ने इसकी चारदीवारी को बिलकुल ही नष्ट कर दिया। इस तरह लगातार फारस के राजाओं के इन हमलों ने इस विशाल चारदीवारी को तो ज़रूर नष्ट कर दिया, लेकिन वे बेबीलोन की हस्ती को दुनिया के नक्शे पर से न मिटा सके। जब सिकन्दर महान भारत से लौटा था तो वह बेबीलोन में नेबुचडनेजर के महल में ही ठहरा था और वहीं पर १३ जून, ३२३ ई० पू० में उसकी मृत्यु हुई। बाद में सिकन्दर के एक सेनापति ने बेबीलोन को पूरी तरह उजाड़ दिया और उससे करीब पचास मील की दूरी पर एक नया नगर बसाया। समय के साथ-साथ इन खंडहरों पर गहरी पर्त जमती चली गई और एक समय ऐसा आया कि संसार के महान् आश्चर्य—बेबीलोन की चारदीवारी की नींव तक ज़मीन के १०० फुट नीचे दब गई। आधुनिक काल में सबसे पहले सन् १५९९ में एन्थोनी सिर्ले नामक एक अंग्रेज़ ने मिसोपोटामिया की यात्रा की थी और वहां पर उसे बेबीलोन के खंडहर दिखाई दिए थे। करीब उसी समय एक इटली-निवासी पिएट्रो डेला-वाले बेबीलोन गया और वहां पर उसने विशाल चारदीवारी के अवशेषों की खुदाई करवाई। इस खुदाई में उसे ऐसी ईंटें मिलीं जिनपर नेबुचडनेजर का नाम लिखा हुआ था। आज भी दीवार के ये अवशेष उसकी गौरवपूर्ण कहानी सुना रहे हैं, लेकिन बेबीलोन के लटकते हुए बाग का कोई भी अवशेष इन खंडहरों में नहीं मिला है। कुछ लोगों का यह भी मानना है कि ऐसा कोई लटकता हुआ बाग बेबीलोन में था ही नहीं, हां महल या दूसरी इमारतों के ऊपर पेड़-पौधे लगाने का रिवाज उस समय बेबीलोन में प्रचलित था और इमारतों के ऊपर लगे हुए इन पेड़-पौधों को देखकर ही शायद कुछ विदेशियों ने लटकते हुए बाग की बात उड़ा दी। इस बात पर पूरी तरह विश्वास नहीं किया जा सकता। ज्यादातर लोग यह मानते हैं कि नेबुचडनेजर ने अपनी रानी के लिए लटकता हुआ बाग बनवाया तो ज़रूर था, लेकिन वह कुछ समय बाद ही नष्ट हो गया।



३

ओलम्पिया में ज़ियस की मूर्ति

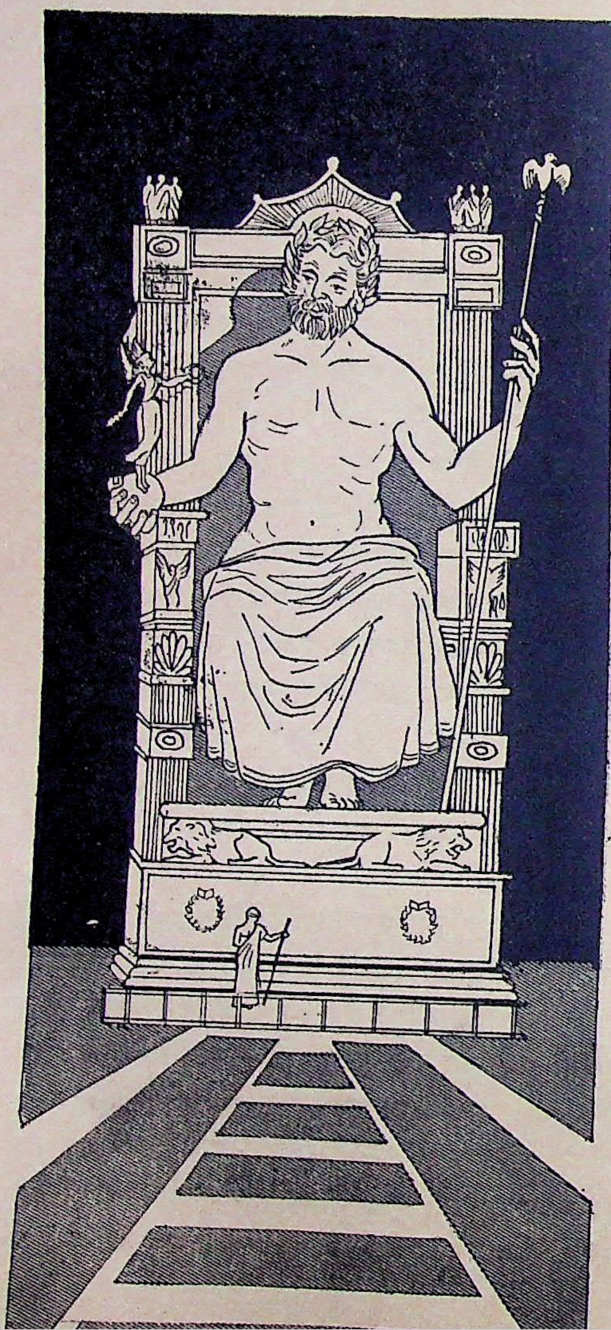
जो कि एक महान् कलाकार की साधना का मूर्तरूप है

बात ईसा के जन्म से ५०० साल पहले की है। यूनान के एथेन्स नामक नगर में चार्मिडेस नाम का एक मशहूर कलाकार रहता था। वह अपने समय का एक माना हुआ कलाकार था और उसका नाम आसपास के देशों में भी प्रसिद्ध था। चार्मिडेस के एक लड़का पैदा हुआ, जिसका नाम फीडियास रखा गया। पिता अपने बेटे को अपनी ही तरह एक बड़ा कलाकार बनाना चाहता था। उस जमाने में सन्तान अक्सर अपने माता-पिता का ही पेशा अपनाती थी। एक कलाकार के सभी गुण बालक फीडियास में शुरू से ही मौजूद थे। जब उसके साथी उसे खेलने के लिए बुलाने आते तो वह अपने माता-पिता के कहने से उनके साथ चला तो जाता था, लेकिन अक्सर वह अपने साथियों से दूर किसी एकान्त जगह पर जाकर बैठ जाया करता था। जानते हैं आप कि वह अकेला एकान्त में बैठा हुआ क्या किया करता था? अकेला बैठा-बैठा वह मिट्टी को तरह-तरह के आकार देने की कोशिश किया करता था। जब माता-पिता ने अपने लड़के की रुचि मूर्तियां बनाने में देखी तो उन्होंने उसके लिए मूर्तिकला की व्यवस्थित शिक्षा का इंतजाम कर दिया। उस जमाने के मूर्तिकला के जाने-माने आचार्यों—हेगियास, एजलाडोस और पौलीगस्टस से फीडियास ने शिक्षा प्राप्त की। उस समय ज्यादातर मूर्तियां संगमरमर पत्थर की बनाई जाती थीं। फीडियास ने अपनी शिक्षा के दौरान ही यह महसूस किया कि इस पत्थर से बनाई गई मूर्तियां खूबसूरत तो बहुत होती हैं, लेकिन वे जिन्दगी के करीब नहीं लगतीं। उन्हें देखकर एकदम से ऐसा नहीं लगता

कि वे जिन्दा इंसान हैं, न कि मूर्तियां। फीडियास ऐसी मूर्तियां बनाना चाहता था, जिन्हें देखकर कोई भी उन्हें जिन्दा इंसान समझ ले। बहुत दिनों तक वह तरह-तरह की चीजों से अपनी इच्छा के मुताबिक मूर्तियां बनाने की कोशिश करता रहा। उसने पत्थर और कांसे से ऐसी मूर्तियां बनाईं जिन्हें देखकर कोई भी आदमी उनके जिन्दा होने के भ्रम में पड़ सकता था, लेकिन वह अपनी इन मूर्तियों से संतुष्ट नहीं था। अन्त में उसने पत्थर और कांसे के साथ ही सोने और हाथीदांत का भी प्रयोग अपनी मूर्तियों में किया। वह सबसे पहला मूर्तिकार था जिसने सोने और हाथीदांत को मूर्तियां बनाने के काम में लिया। उसने अपनी मूर्तियों के ढांचे को लकड़ी का बनाया और उसके ऊपर सोने तथा हाथीदांत की बहुत ही कारीगरी से गढ़ी गई प्लेटों को जड़ा। इन प्लेटों को वह इस तरह जड़ता था कि उनके जोड़ दिखाई ही नहीं देते थे और मूर्तियां बिलकुल जीवित-सी लगती थीं।

जब फीडियास अपनी प्रसिद्धि के ऊंचे शिखर पर था उस समय एथेन्स में पेरीक्लीस नाम का राजा राज्य करता था। यह ४४४ ई० पूर्व की बात है। फीडियास की उम्र उस समय ५० साल की थी। पेरीक्लीस और उसकी रानी आसपासिया, दोनों को ही नई-नई इमारतें तथा मूर्तियां बनवाने का शौक था। जब उन्होंने फीडियास की ख्याति की बात सुनी तो उसे राजदरबार में बुला भेजा। राजा ने फीडियास को अपनी तथा अपनी रानी की इच्छा बताते हुए कहा कि हम चाहते हैं कि एथेन्स खूब खूबसूरत नगर बन जाए तथा इसमें एक बहुत ही सुन्दर राजमहल और सजीव मूर्तियां बनाई जाएं। यह काम हम तुम्हें सौंपना चाहते हैं, क्योंकि हमने तुम्हारा बहुत नाम सुना है और तुम्हारी कुछ सुन्दर मूर्तियां देखी भी हैं। फीडियास राजा की बात से बहुत खुश हुआ। वह तो खूब विशाल और अनोखी मूर्तियां बनाना चाहता था। लेकिन पैसे की कमी के कारण वह अपनी जरूरत की चीजें नहीं जुटा पाता था। उसने महल और अनोखी मूर्तियां बनाने की जिम्मेदारी ले ली।

महल के निर्माण का काम तो फीडियास की देखरेख में उसके बहुत-से शिष्य कर रहे थे, वह खुद यूनानी देवी एथेना की एक विशाल मूर्ति के निर्माण में जुट गया। इस मूर्ति का ढांचा बहुत कीमती लकड़ी का बनाया गया था और इसपर जड़ने के लिए सोने तथा हाथीदांत की प्लेटें फीडियास रात-दिन अपनी भूख-प्यास भूलकर गढ़ता रहता था। सोने और हाथीदांत के इन गढ़े हुए टुकड़ों को वह इतनी कारीगरी से एक-दूसरे से जोड़ता था कि देखनेवाले को ऐसा महसूस होता था कि यह पूरी मूर्ति किसी एक टुकड़े से बनाई गई है। जब यह मूर्ति बनकर तैयार हुई तो फीडियास की प्रसिद्धि में चार चांद लग गए, क्योंकि



यह पूरी दुनिया में अपने ढंग की अनोखी मूर्ति थी।

फीडियास की इतनी प्रसिद्धि से कुछ दूसरे कलाकारों को जलन होने लगी। उन्हें यह बात बहुत नागवार गुज़रती थी कि राजा फीडियास को इतना सम्मान देता है। एक समय ऐसा आया जब राजा पेरीक्लीस की ताकत घटने लगी और प्रजा पर से उसका प्रभाव कम होने लगा। ऐसे समय का फायदा उठाने के लिए फीडियास के प्रतिद्वन्द्वियों ने उसपर यह आरोप लगाया कि राज्य के खज़ाने से जो सोना उसे मूर्ति बनाने के लिए मिला था उसका थोड़ा ही भाग उसने मूर्ति में लगाया है और बाकी सोना वह खुद खा गया है। इस आरोप से एक बार तो ऐसा लगा कि अब इतना बड़ा कलाकार भी राज्य के कोप से नहीं बच सकेगा और उसे अपनी जिन्दगी के बाकी दिन जेल में काटने पड़ेंगे, लेकिन आश्चर्य की बात कि जब राजा ने फीडियास को निर्दोष घोषित कर दिया। असल में हुआ यह था कि राजा पेरीक्लीस ने उसे यह आदेश दिया

था कि मूर्ति इस प्रकार बनाई जाए कि युद्ध या और मुसीबत के दिनों में उसकी सोने की प्लेटों को उतारकर रखा जा सके। वे प्लेटें राज्य द्वारा ही उतारकर रख ली गई थीं। इससे फीडियास के प्रतिद्वन्द्वियों के मुंह पर करारी चपत पड़ी और वे इसका बदला लेने के लिए किसी दूसरे मौके की तलाश में रहने लगे। उन्हें ज्यादा दिन मौके की इंतज़ार नहीं करनी पड़ी। कुछ लोगों ने देखा कि एथेना देवी की मूर्ति के पास ही जो लड़ाई का दृश्य खोदा गया है उसमें जो योद्धा दिखाया गया है उसकी शक्ल पेरीक्लीस से बिलकुल मिलती-जुलती है। उसी दृश्य में एक गंजा आदमी एक बड़ा-सा पत्थर उठाकर एक शत्रु को मारता हुआ दिखाया गया था। यह आदमी और कोई नहीं, खुद फीडियास ही था। लोगों ने इस दृश्य को देखकर फीडियास पर धार्मिक नियमों को तोड़ने का आरोप लगाया। उस ज़माने में यूनानी धर्म में वास्तविकता को स्थान नहीं दिया जाता था। कुछ विद्वानों का मानना है कि फीडियास को इस अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया था और उसे कड़ी सज़ा दी गई थी, लेकिन एक किस्सा यह भी प्रचलित है कि फीडियास सज़ा के डर से एथेन्स छोड़कर भाग खड़ा हुआ और वह कभी अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ा ही नहीं। यह दूसरा किस्सा ही ज्यादा सही मालूम देता है। अभी फीडियास के भाग्य में अपने शत्रुओं के हाथ पड़कर बेमौत मरना नहीं लिखा था वरन् उसे तो एक ऐसी अनोखी मूर्ति भी बनानी थी जिसने बाद में उसे तो अमर कर ही दिया, साथ ही वह मूर्ति दुनिया-भर के लोगों के किए एक आश्चर्य की चीज़ बन गई।

फीडियास एथेन्स से भागकर ओलम्पिया आ गया। आपने ओलम्पिक खेलों का नाम तो ज़रूर सुना होगा। और शायद आप सोचने भी लगे होंगे कि ओलम्पिया और ओलम्पिक में नामों की कुछ समानता नज़र आती है। आपका सोचना बिलकुल सही है। सबसे पहले ७७६ ई० पू० में ओलम्पिया में ही ओलम्पिक खेलों की शुरुआत हुई थी। ये खेल हर चौथे साल होते थे। ओलम्पिया उस ज़माने में यूनान का एक मशहूर धार्मिक स्थान माना जाता था। दूर-दूर से लोग इसकी तीर्थ-यात्रा करने आया करते थे। यह यूनान का ही प्रसिद्ध धार्मिक स्थान नहीं था वरन् दूर-दूर के देशों के लोग भी यहां की धर्म-यात्रा करने को आते थे। ओलम्पिया के बीचोबीच महान् देवता ज़ियस का मन्दिर था। यूनानी लोगों का मानना था कि ज़ियस दूसरे सभी देवताओं का पिता है, वह दुनिया का सबसे ताकतवर शासक है। पुराने यूनानी किस्से-कहानियों के मुताबिक ज़ियस देवता क्रोनास और देवी री का पुत्र था। जब वह गद्दी पर बैठा तो उसने हेरा को अपनी रानी बनाया, पोसीडन

को समुद्र का शासन सौंपा, डिमीटर को पूरी धरती के फलों का स्वामी बनाया और हेस्टिया को मानव-समाज के सामाजिक जीवन का नियन्ता बनाया। ऐसा विश्वास किया जाता है कि उसकी राजधानी स्वर्ग में है और वह पूरी दुनिया को अपने नियंत्रण में रखता है। इस सबसे पता चलता है कि यूनानी लोग जियस को कितना अधिक मानते थे। जियस का यह मन्दिर ४७० ई० पू० में बना था। ओलम्पिक खेलों में जीतनेवाले लोगों को इस मन्दिर में ही सम्मानित किया जाता था। इस मन्दिर में सिर्फ तीन तरफ ही जनता को अन्दर जाने दिया जाता था। एक तरफ जियस की विशाल मूर्ति बनवाने की योजना थी, लेकिन इस विशाल देवता की विशाल मूर्ति बनाने लायक कोई मूर्तिकार मिलता ही नहीं था। ऐसे ही समय में जब कि ओलम्पियावासी जियस की मूर्ति बनाने के लिए किसी योग्य कलाकार की तलाश में थे, फीडियास एथेन्स से अपने कुछ शिष्यों के साथ भागकर ओलम्पिया आ पहुंचा। ओलम्पियावासियों ने फीडियास का स्वागत किया, वे लोग उसकी कला और प्रसिद्धि से अनभिज्ञ नहीं थे। फौरन ही जियस की विशाल मूर्ति बनाने का काम इस महान् कलाकार को सौंप दिया गया।

फीडियास को अपने प्रतिद्वन्द्वियों से बदला लेने का यह अच्छा मौका मिल गया था। उसने अपने मन में यह निश्चय किया कि वह ऐसी मूर्ति बनाएगा जिसकी बराबरी दुनिया की कोई भी दूसरी मूर्ति न कर सके। वह चाहता था कि खुद उसके द्वारा ही एथेन्स में बनाई हुई एथेना देवी की मूर्ति भी नई मूर्ति के सामने फीकी पड़ जाए और लोग एथेन्स की मूर्ति को बिलकुल भुला दें। इस दृढ़ निश्चय से वह अपने काम में लग गया।

जिस मन्दिर में जियस की मूर्ति स्थापित की जानी थी, उसके पास ही फीडियास ने अपने काम करने के लिए एक कमरा बनवाया। इस कमरे में उसने अपने १२ महान् देवताओं की प्रतिमाएं लगाईं। इन प्रतिमाओं के सामने रोज सुबह वह प्रार्थना किया करता था। प्रार्थना करने के बाद ही वह अपने काम में लगता था। ओलम्पिया के राजा ने जियस की मूर्ति बनाने के लिए फीडियास को उसकी इच्छा के मुताबिक ही सोना, हाथीदांत, कीमती हीरे-जवाहरात तथा दूसरे कीमती पत्थर, चांदी और कांसे का इन्तजाम कर दिया था। उसे किसी बात की कमी न थी। वह अपनी भूख-प्यास भूलकर महान् देवता की मूर्ति बनाने में जुट गया। इस मूर्ति का निर्माण वह किसी लालच से नहीं कर रहा था, वरन् उसकी पूरी साधना ही कसौटी पर चढ़ गई थी। उसने बड़ी सावधानी से मूर्ति का लकड़ी का ढांचा तैयार किया। इस ढांचे को लोहे की छड़ें लगाकर मजबूत किया गया तथा लकड़ी को खूब

तेल पिलाया गया, जिससे वह जल्दी ही खराब न हो। इसके बाद उसने हाथीदांत की पतली चादरें बनाईं और इन्हें बड़ी सफाई से एक-दूसरे से जोड़कर ढांचे पर जड़ दिया। देवता की आंखें दो बहुत ही कीमती और चमकीले पत्थरों की बनाई गई थीं। सोने के बारीक-बारीक तारों का कपड़ा उसे पहनाया गया था। पांवों में भी सुनहरे जूते पहनाए गए थे। इस विशाल मूर्ति को एक विशाल सिंहासन पर बैठाया गया था। यह सिंहासन भी बड़ी बारीकी से सजाया गया था। देवता के पांव एक स्टूल पर रखे गए थे और यह स्टूल एक शेर के ऊपर टिका हुआ था। मन्दिर की दीवारों पर फीडियास ने ओलम्पिया के वीर शासक हरक्यूलिस की विजयों और संघर्षों के चित्र खोदे थे। जियस के एक हाथ में रत्नों और मणियों से जड़ा हुआ एक डंडा दिया गया था।

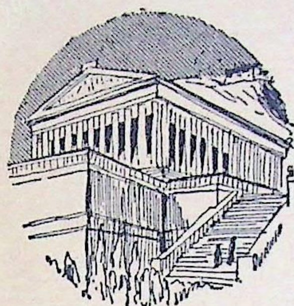
आखिर आठ लम्बे सालों की मेहनत के बाद फीडियास इस अनोखी मूर्ति को पूरी कर सकने में सफल हो सका। और जब यह मूर्ति बनकर तैयार हुई तो यूनान ही नहीं वरन् पूरी दुनिया के लिए एक आश्चर्य बन गई। यह मूर्ति एथेन्स की एथेना देवी की मूर्ति से कहीं ज्यादा खूबसूरत और सजीव थी। खुद फीडियास अपनी ही कृति को देखकर ताज्जुब में पड़ गया था कि उसके हाथों इतनी सजीव और अनोखी कृति किस तरह बन गई। वास्तव में यह मूर्ति एक कलाकार की जिन्दगी-भर की साधना का मूर्त रूप थी, तभी तो देखनेवालों को लगता था कि महान् देवता जियस अभी बोल पड़ेंगे। जिस मंच पर इस मूर्ति को बनाया गया था, वह २० फुट चौड़ा और ३० फुट लम्बा था। मंच को भी कीमती पत्थरों और सोने-चांदी से सजाया गया था और उसपर विभिन्न धार्मिक किस्सों को चित्रित किया गया था। जियस की मूर्ति ४० फुट ऊंची थी।

एक लोककथा के अनुसार एक दिन प्रार्थना के बाद फीडियास ने भगवान् जियस की मूर्ति को सम्बोधित करते हुए कहा, "हे मेरे आराध्यदेव ! क्या आपको मेरी यह कलाकृति स्वीकार है ?" कहते हैं कि फीडियास के प्रश्न के उत्तर में खुली छत से एक तेज बिजली मूर्ति के सामने आकर गिरी। इसे फीडियास ने अपने देवता की स्वीकृति माना। जहां पर बिजली गिरी थी वहां कांसे का एक खूबसूरत और विशाल फूलदान रख दिया गया। उस दिन ओलम्पिया-निवासियों ने खूब खुशियां मनाईं। फीडियास की इस कलाकृति की बात हवा की तरह फैल गई। लोग उत्सुकतावश इसे देखने के लिए आने लगे। अब तो ओलम्पिया में मूर्ति के दर्शन करने आनेवाले यात्रियों की हमेशा भीड़-सी रहने लगी। मूर्ति को देखकर यूनानी लोगों को लगता था कि फीडियास ने उनके भगवान् को साकार कर दिया है।

संसार के इस महान् आश्चर्य के निर्माण के बाद फीडियास ने क्या किया, इसकी जानकारी यूनानी इतिहास से नहीं मिलती। हां, जियस की मूर्ति का बाद का इतिहास ज़रूर मिलता है। मूर्ति के निर्माण के ६० साल बाद हाथीदांत में दरारें पड़ गई थीं। मेस्सेने के डामोफान नाम के कलाकार ने उन दरारों को ठीक किया था। सीज़र के ज़माने में वर्षा के दिनों में इसपर बिजली गिर गई थी, लेकिन उससे कोई खास नुकसान मूर्ति को नहीं पहुंचा। सम्राट् कालीगुला इस मूर्ति को रोम ले जाना चाहते थे। कहते हैं कि जो कारीगर इसे लेने आए थे, जब वे मूर्ति के पास पहुंचे तो उससे एक तेज़ रोशनी-सी निकली, जिससे वे डरकर भाग गए। जो जहाज़ इस मूर्ति को लेने रोम से आए थे उनपर बिजली गिर गई और वे समुद्र में ही जलकर राख हो गए। इस तरह सम्राट् मूर्ति को रोम ले जाने की अपनी इच्छा पूरी न कर सके। ३९३ ई० पू० में ओलम्पिक खेल खत्म हो गए और ओलम्पिया शहर का पतन होने लगा। ४०८ ई० पू० में जियस के मन्दिर में भयानक आग लग गई और कहते हैं उसी आग में वह मूर्ति भी जल गई। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि सम्राट् थियोडोसियस प्रथम जियस की मूर्ति को कान्सटेनटिनोपल ले गए थे, जहां पर यह ४१६ ई० पू० की आग में जलकर नष्ट हो गई। एथेन्स की मूर्ति एथेना के बारे में भी यही कहानी मशहूर है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि इसमें कितनी सच्चाई है।

मन्दिर की मूर्तियों जल जाने के बावजूद उसकी चारदीवारी नष्ट नहीं हुई। लेकिन एक शताब्दी बाद वह चारदीवारी भी एक भयानक भूचाल ने मिटा दी। ओलम्पिया नगर भी नष्ट हो गया। खंडहरों के ऊपर से आसफियस नदी का पानी बहने लगा। इस तरह कभी का एक प्रसिद्ध यूनानी नगर और ओलम्पिक खेलों का जन्मदाता संसार के नक्शे पर नहीं रहा।

सन् १८७५ ई० में जर्मनी के कुछ विद्वानों ने इन खंडहरों की खोज करनी शुरू की और यह खोज सन् १८८१ ई० तक चलती रही। अपने ज़माने का मशहूर नगर ओलम्पिया ज़मीन में १६ फुट नीचे दब गया था। खुदाई करने पर पूरा का पूरा ओलम्पिया नगर खंडहरों के रूप में निकल आया। वह स्टेडियम, जहां ओलम्पिक खेल हुआ करते थे, बड़ी-बड़ी इमारतों तथा राजभवनों के खंडहर तथा जियस व अन्य अनेक मन्दिरों के कुछ खण्ड भी इस खुदाई में मिले। अगर अब आप ओलम्पिया के इन खंडहरों को देखने जाएं तो मन्दिरों की नींव, छोटी-छोटी सड़कें, स्टेडियम में लगे हुए संगमरमर के पत्थर तथा और बहुत-सी चीज़ें देखने को मिल जाएंगी, लेकिन जियस की मूर्ति, दुनिया का एक महान् आश्चर्य अब आपको देखने को नहीं मिलेगा।



४

डायना देवी की मूर्ति

जो स्वर्ग से धरती पर अवतरित हुई थी

यूनानी लोगों का विश्वास था कि धन-धान्य की देवी आर्टिमिस जियस और लीटो की पुत्री थी। रोमन लोग इसी देवी को डायना कहते थे। रोमन लोग इसे बच्चों की रक्षा करनेवाली देवी मानते थे। कुछ लोग इस देवी को आर्टिमिस ब्रैरोनिया कहते थे। उनका मानना था कि यह धरती पर भालू के रूप में रहती थी और वनों में विचरण करती थी। जब देवी अप्रसन्न होती थी तो वह मनुष्य को खा जाती थी। देवी को प्रसन्न करने के लिए पास के जंगलों में रहनेवाले भालू को मनुष्यों की बलि चढ़ाई जाती थी। बलि चढ़ाने के लिए एक उत्सव-सा मनाया जाता था, जिसमें छोटी लड़कियां भालू की खाल के कपड़े पहनकर भालू के सामने नृत्य करती थीं और फिर उनमें से ही किसी एक लड़की की बलि चढ़ा दी जाती थी। एक बार एक मनुष्य ने बलि चढ़ाने के लिए अपनी बहुत प्यारी बकरी दी। वह इस बकरी को अपनी लड़की की तरह प्यार करता था। लोगों ने देखा कि भालू बकरी की बलि चढ़ाई जाने पर भी प्रसन्न रहता है तो उन्होंने अब लड़कियों की बलि चढ़ाना बन्द कर दिया और जानवरों की ही बलि चढ़ाई जाने लगी। एथेन्स में भालू के रूप में एक मूर्ति भी मिली थी, जिससे यह बात सही मालूम देती है। कहते हैं कि बाद में इसी देवी को लोगों ने अपनी कल्पना से ही आदमी की शक्ल दे दी। असल में डायना देवी के बारे में बहुत-से किस्से प्रचलित हैं।

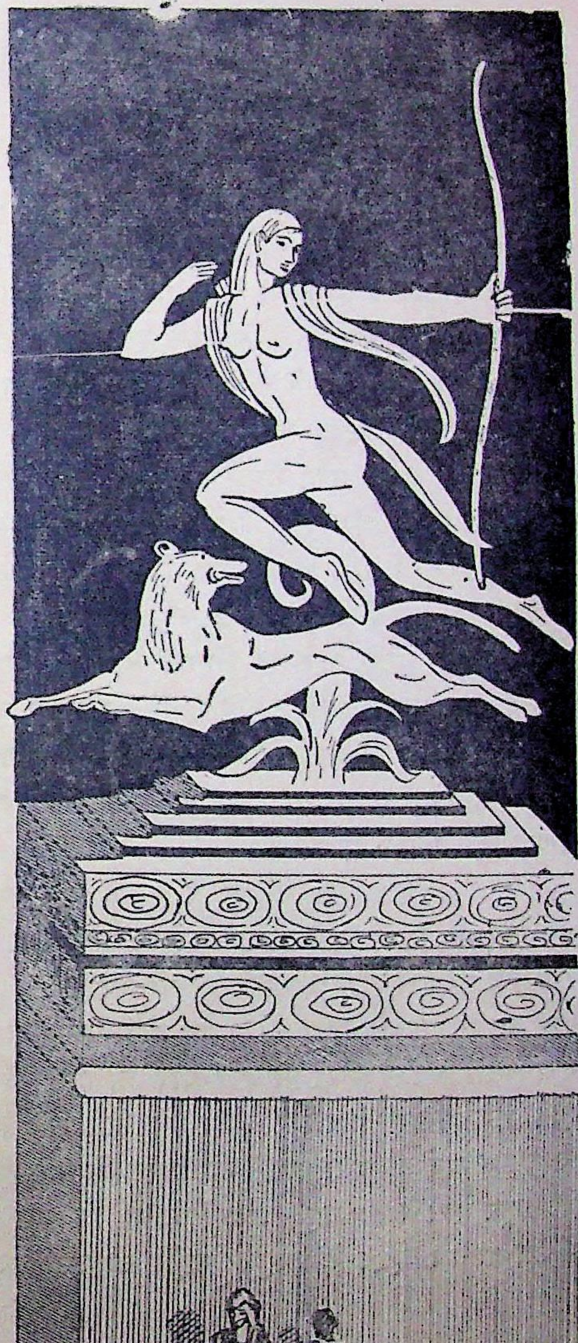
बहुत-से लोग यह भी मानते थे कि एक दिन सुबह लोगों ने एक मैदान में देवी की लकड़ी की एक प्रतिमा खड़ी पाई, यहप्र तिमा स्वर्ग से आई थी। तभी से लोगों ने इसकी पूजा-

उपासना शुरू कर दी। जहां पर यह मूर्ति धरती पर अवतरित हुई थी वह जगह एशिया माइनर में थी। इस मूर्ति के बहुत-से स्तन थे क्योंकि देवी सभीकी माता थीं और सभीके साथ एक जैसा माता के समान व्यवहार कर सकती थीं।

जिस जगह यह मूर्ति अवतरित हुई थी वहां पर एक छोटी-सी घाटी थी। कहते हैं कि होमर से काफी दिन पहले ही कुछ अमेजन लोग यहां आकर बस गए थे। अमेजन की महिला सैनिकों ने यहां पर एक नगर बसाया। करीब ११०० ई० पू० में एथेन्स के राजा कोड्रस का पुत्र एण्ड्रोक्लस इस घाटी में आया और उसने इस घाटी को इफिसस नगर के रूप में विकसित किया। इसी इफिसस नगर में बाद में दुनिया-भर के लिए महान् आश्चर्य पैदा करनेवाला डायना देवी का विशाल मन्दिर बनवाया गया था। अपने ज़माने में इफिसस एक मशहूर यूनानी नगर बन गया था। यह एशिया माइनर के एक प्रसिद्ध बन्दरगाह के रूप में विकसित हो गया था और यह न केवल धर्म और ज्ञान वरन् व्यापार का भी एक बहुत बड़ा केन्द्र बन गया।

अमेजन लोग अपनी देवी की उपासना करते थे, जब यूनानी लोग यहां आए तो उन्होंने अमेजन लोगों की देवी को अपनी डायना देवी ही माना। इस तरह डायना न केवल यूनानी लोगों की वरन् वहां रहनेवाले आदिम लोगों की भी मिली-जुली देवी बन गई। देवी की जो मूर्ति स्वर्ग से उतरी थी, उसकी उपासना बहुत दिनों तक ऐसे ही होती रही और उसके लिए कोई मन्दिर वग़ैरह नहीं बनवाया गया। लेकिन जैसे-जैसे देवी की पूजा करनेवालों की संख्या बढ़ती गई वैसे-वैसे लोगों ने महसूस किया कि देवी का एक विशाल मन्दिर बनवाया जाए। पहले उस मूर्ति को एक हरे पत्थर के विशाल मंच पर स्थापित कर दिया गया। बाद में इस मंच के चारों ओर चार दीवारें बनवा दी गईं, लेकिन अभी तक इसकी कोई छत नहीं बनाई गई थी। मूर्ति खुले आसमान में रखी हुई थी। उस ज़माने में यह माना जाता था कि जो भी आदमी डायना देवी की पूजा करता है उसे देवी सुख और समृद्धि प्रदान करती है। डायना पूरे यूनान-भर में बहुत प्रसिद्ध हो गई थी। ६५० ई० पू० में डायना का एक दूसरा मन्दिर बनवाने का काम शुरू करवाया गया। यह मन्दिर पहले वाले से काफी बड़ा था, लेकिन इसमें मां डायना की मूर्ति स्थापित नहीं की गई। मूर्ति को पुराने वाले मन्दिर में ही लगा रहने दिया गया। तभी जंगली सिमेरियन लोगों ने पूरे यूनान को रौंद डाला और जगह-जगह आग लगाकर मन्दिरों को जला डाला। लेकिन इस सब दुर्घटना से इफिसस नगर बचा रहा और डायना देवी के मन्दिर को किसी प्रकार की कोई हानि नहीं पहुंची।

लोगों ने इसे डायना देवी का प्रताप माना और इस खुशी में देवी का एक और नया मन्दिर बनवाया। यह मन्दिर बहुत विशाल और मज़बूत बनवाया गया था और यह बहुत-से खम्भों से घिरा हुआ था। इसमें डायना देवी की मूर्ति भी स्थापित की गई।



देवी की दिनोंदिन बढ़ती हुई प्रसिद्धि के कारण लोग दूर-दूर से मां डायना के दर्शन करने आया करते थे और तरह-तरह की कीमती भेंट देवी को चढ़ाया करते थे। कहते हैं कि इस भेंट से ही मन्दिर में करोड़ों रुपये इकट्ठे हो गए थे। देवी को चढ़ाई जाने वाली चीज़ों की संख्या इतनी ज़्यादा थी कि मन्दिर भी उन्हें रखने के लिए छोटा पड़ने लगा। लोगों ने यह महसूस किया कि उनकी प्रिय देवी का एक नया और पहले सभी मन्दिरों से बहुत बड़ा मन्दिर बनवाया जाना चाहिए। सभी लोगों ने इस मन्दिर के बनवाने में होनेवाले खर्च में अपना-अपना हिस्सा देने का फैसला किया। उसी समय ५६० से ५४६ ई० पू०

तक क्रोसस लीडिया का राजा था। क्रोसस आज भी पुरानी दुनिया के सबसे ज्यादा धनवान् आदमी के रूप में इतिहास में मशहूर है। इफिसस पर उसने अपना अधिकार कर लिया था। क्रोसस को उसके कुछ विद्वान् मित्रों ने बताया कि "आपकी धन-दौलत इतनी ज्यादा है कि उससे देवता तक जलन महसूस कर सकते हैं, इस खतरे से बचने के लिए आप देवी का विशाल मन्दिर बनवाएं, जिससे कि मां डायना आपकी रक्षा कर सकें।" क्रोसस की समझ में यह बात आ गई और इफिसस में डायना का जो नया मन्दिर बनने वाला था उसका निर्माण-कार्य क्रोसस ने अपने हाथों में ले लिया। इस मन्दिर को पुराने मन्दिर के पास ही बनवाया गया था, लेकिन इसे पुराने सभी मन्दिरों से कुछ ऊंचे धरातल पर बनवाया गया था। इसे बनाने के लिए इफिसस से सात मील की दूरी पर स्थित एक पहाड़ी से सफेद संगमरमर पत्थर लाया गया था। यह मन्दिर ८० हजार वर्गफुट के क्षेत्र में बना हुआ था और इसकी मुख्य दीवारें ३६० फुट लम्बी तथा १८० फुट चौड़ी थीं। इस मन्दिर में १०० से ज्यादा संगमरमर के खूबसूरत खम्भे बनाए गए थे और इन खम्भों पर ही मन्दिर की छत टिकी हुई थी। इसकी दीवारों पर बहुत सुन्दर खुदाई की गई थी। इस मन्दिर के बनने में १२० साल लगे थे। यह ४३० और ४२० ई० पू० के बीच में देवी को समर्पित किया गया था। उस मौके पर इफिसस में बहुत बड़ा उत्सव मनाया गया था। दुनिया-भर के लोग इस उत्सव में शामिल होने के लिए इफिसस आए थे। इस मौके पर खेलों और दूसरी प्रतियोगिताओं का आयोजन भी यहां किया गया था। अब डायना को दुनिया की सबसे महा देवी माना जाने लगा था और उसके भक्तों द्वारा चढ़ाई जानेवाली भेंटों की संख्या बहुत ज्यादा बढ़ गई थी।

३६५ ई० पू० में इस मन्दिर में आग लग गई थी, जिससे इसका कुछ हिस्सा जल गया था, लेकिन तभी इसकी मरम्मत भी करवा दी गई थी। बाद में इस मन्दिर के नष्ट होने की एक बहुत दिलचस्प कहानी प्रचलित है। कहते हैं कि इफिसस में हिरोस्ट्रेटस नाम का एक यूनानी रहता था। वह कोई ऐसा काम करना चाहता था जिससे कि उसका नाम हमेशा के लिए अमर हो जाए और उस काम की वजह से आनेवाली हरेक पीढ़ी के लोग उसके नाम को याद कर सकें। इसी विचार से प्रेरित होकर उसने डायना देवी के इस विशाल मन्दिर को जला डालने का फैसला किया, क्योंकि यह मन्दिर उस समय पूरी दुनिया में मशहूर था। अतः यह स्वाभाविक था कि इसे जलानेवाले का नाम भी पूरी दुनिया में फैल जाता। ३५६ के अक्तूबर महीने की उसी रात को जिस रात सिकन्दर महान् पैदा

हुआ था, हिरोस्ट्रेटस ने इसको जला डाला। कहते हैं कि जिस समय मन्दिर जलाया गया, उस समय मां डायना सिकन्दर के जन्म के अवसर पर मकदूनिया गई हुई थीं। हिरोस्ट्रेटस को मौत की सजा दी गई। हालांकि उसने मन्दिर को जलाकर एक बड़ा अपराध किया था, लेकिन यह मां डायना, इफिसस नगर और पूरी दुनिया के लिए एक वरदान साबित हुआ क्योंकि इसके बाद ही डायना का वह विशाल मन्दिर बन सका जो पूरी दुनिया के लिए सैकड़ों सालों तक आश्चर्य बनकर खड़ा रहा।

नये मन्दिर के निर्माण का काम ३५० ई० पू० में शुरू हुआ। कहते हैं कि इस मन्दिर के निर्माण में भी करीब सवा सौ साल लगे थे। यह मन्दिर एक साढ़े नौ फुट ऊंचे मंच पर बनाया गया था। मन्दिर की लम्बाई ३४२ फुट और चौड़ाई १६४ फुट थी। छत को टिकाने के लिए ६ फुट अर्द्धव्यास के १२७ खम्भे बनाए गए थे। इनमें से कुछ गोल थे और कुछ चौकोर। ये सभी खम्भे किसी न किसी राजा ने दान में दिए थे। इनपर बहुत सुन्दर खुदाई की गई थी। मन्दिर में घुसते ही डायना देवी की विशाल संगमरमर की मूर्ति स्थापित की गई थी। कहते हैं कि यह मूर्ति लकड़ी की उसी मूर्ति के आधार पर बनाई गई थी जो इफिसस में स्वर्ग से अवतरित हुई थी। इस मन्दिर के निर्माण में पूरे एशिया के राजाओं ने अपना सहयोग दिया था। इसके निर्माण के लिए एक दलदल वाली जमीन चुनी गई, जिससे भूचाल इस मन्दिर का कुछ न बिगाड़ सके। कहते हैं कि मन्दिर की नींव पुख्ता करने में ही इतना पैसा खर्च हुआ था जितने में बाद में पूरा मन्दिर बना। डायना की मूर्ति संगमरमर पत्थर की बनाई गई थी और उसे हीरे-जवाहरातों से सजाया गया था। जब यह मन्दिर बनकर तैयार हुआ तो पूरी दुनिया के लिए एक आश्चर्य की चीज बन गया। इसके आश्चर्यजनक होने का एक कारण इसकी विशालता और कला ही नहीं थी वरन् इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि दुनिया-भर के न जाने कितने ही लोग इसकी उपासना करते थे और इसे मिलने वाली भेंटों की संख्या इतनी ज्यादा थी कि मन्दिर दुनिया का एक बहुत बड़ा बैंक बन गया था।

इस मन्दिर के पुजारी और पुजारिनें हमेशा ही अविवाहित रहते थे। मन्दिर का प्रमुख अधिकारी मेगाबाइजस कहलाता था, यूनानी लोग इस अधिकारी को नियोकोरस कहते थे। इस अधिकारी की नियुक्ति राज्य द्वारा होती थी। क्योंकि डायना देवी का सम्बन्ध अमेजन से माना जाता था। इसलिए उसकी पूजा-उपासना में पुजारिनों का खास महत्त्व था। उन्हें पारथीनाय कहा जाता था, जिसका मतलब होता था क्वारी लड़कियां। पुजारिनें

कई वर्गों में बंटी हुई थीं। उस समय मन्दिर के बाहर बहुत-से कारीगर बैठे रहते थे, जो मन्दिर और डायना देवी की मिट्टी और चांदी की मूर्तियां बनाकर विदेशों से आनेवालों को बेचते थे। विदेशी लोग इन मूर्तियों को पवित्र यादगार के रूप में ले जाते थे। साल में एक बार मन्दिर की मूर्ति को पूरे नगर में जुलूस के रूप में निकाला जाता था। कहते हैं कि यह जुलूस हर साल २५ मई को निकाला जाता था, क्योंकि यह माना जाता था कि इसी दिन देवी की लकड़ी की प्रतिमा पृथ्वी पर अवतरित हुई थी। सालुतारिस नामक एक आदमी ने मन्दिर को बहुत वजनी-वजनी सोने तथा चांदी की मूर्तियां भेंट की थीं। उसने चार हजार डालर की कीमत के धन का एक ट्रस्ट बना दिया था और यह पैसा जरूरतमन्द लोगों को ब्याज पर दिया जाता था। इससे जो आमदनी होती थी उसे मन्दिर के ऊपर खर्च किया जाता था। यह मन्दिर नगर से करीब एक मील की दूरी पर था। मन्दिर से नगर तक ३५ फुट चौड़ी एक सड़क बनाई गई थी। २५ मई को निकलनेवाले जुलूस में बहुत-से पुजारी और पुजारिनें देवी के गीत गाते हुए निकलते थे। कहते हैं कि इस उत्सव में पुजारिनें देवी की मूर्ति के आगे नृत्य करती हुई चलती थीं। यह जुलूस एक बड़े सभागृह में जाकर खत्म होता था। यहां एक बहुत विशाल मंच बना हुआ था, जिसपर मूर्तियां ले जाई जाती थीं और जहां उन्हें सब लोग देख सकते थे। उत्सव के खत्म हो जाने पर मूर्तियों को बाजे-गाजे के साथ फिर से मन्दिर में ले जाकर स्थापित कर दिया जाता था। इफिसस में यूरोप, एशिया और अफ्रीका के बहुत-से लोग आया करते थे और देवी को अपनी अमूल्य भेंट चढ़ाया करते थे। कलाकार लोग अपनी सबसे अच्छी कलाकृति देवी को चढ़ाया करते थे। इस प्रकार मन्दिर का एक बड़ा संग्रहालय बन गया था।

उस समय एशिया माइनर में लगातार युद्ध होते रहते थे, पुराने राज्य और नगर नष्ट होते रहते थे और उनकी जगह नये नगर तथा राज्य पनपते रहते थे। लेकिन इस सब-के बीच इफिसस को कोई नुकसान नहीं पहुंचा सका। डायना देवी का मन्दिर सैकड़ों बरसों तक सुरक्षित खड़ा रहा। ऐसा माना जाता है कि देवी की ही कृपा से नगर युद्धों से बचा रहा, दूसरे इफिसस के दुश्मन भी देवी के भक्त थे, इसीलिए वे इफिसस पर हमला नहीं करते थे। सिकन्दर महान् का नाम भी इस मन्दिर के साथ जुड़ा हुआ है। कहते हैं कि जब सिकन्दर इफिसस आया तो उसने यहां के लोगों से कहा कि वह इस मन्दिर के बनाने में लगा सारा खर्चा दे देगा अगर उसे अपने नाम से देवी को समर्पित करने दिया जाए। इफिसस निवासी सिकन्दर को नाराज भी नहीं करना चाहते थे और यह भी नहीं चाहते थे

कि कोई विदेशी उनकी देवी के मन्दिर को अपने नाम से समर्पित करे। उन्होंने बड़ी तरकीब से उत्तर देते हुए सिकन्दर से कहा, "यह अच्छा नहीं लगता कि एक देवता (सिकन्दर) किसी दूसरे देवता को मन्दिर समर्पित करे।" यह बात सिकन्दर की समझ में आ गई थी और उसने अपने नाम से मन्दिर को देवी को समर्पित करने का विचार छोड़ दिया था। रोमन लोगों के जमाने में भी इफिसस रोम का एक प्रमुख नगर बना रहा। एक बार इफिसस के लोगों ने रोम साम्राज्य के खिलाफ विद्रोह कर दिया। और जो रोमन लोग नगर में आए हुए थे उन सबका कत्ल कर दिया। इसपर रोम से एक सेना इफिसस भेजी गई थी और उसे वापस रोम के अधीन कर लिया गया था। एण्टोनी ने भी इसे अपने कब्जे में कर लिया था और उसने क्लिओपैट्रा के साथ आराम से कुछ दिन यहां बिताए थे।

समय ने पलटा खाया और संसार में ईसाई धर्म का बोलबाला हो गया। ईसा की मृत्यु के ५७ साल बाद सन्त पाल इफिसस आए। उन्होंने अपनी मीठी आवाज में लोगों को ईसा के उपदेश सुनाने शुरू किए। जो भी यात्री विदेशों से देवी के दर्शन करने आते थे उन्हें सन्त पाल ईसाई धर्म के उपदेश देते थे। इन उपदेशों को सुनकर विदेशी यात्री इतने ज्यादा प्रभावित होते थे कि वे नये धर्म की दीक्षा लेकर इफिसस से लौटते थे। इस तरह ईसाई धर्म ने देवी के प्रभाव को कम कर दिया। बाइबिल की एक किताब में इस बात का जिक्र मिलता है। उसमें लिखा गया था कि सन्त पाल ने इफिसस में ईसाई धर्म का प्रचार किया। उन्होंने कहा कि वह कोई भी भगवान् पूजा के लायक नहीं होता जिसकी रचना आदमी खुद करता है। कुछ आदमी सन्त पाल से इतने ज्यादा प्रभावित हुए कि उन्होंने अपने पुराने धर्म-ग्रंथ जला दिए और वे ईसाई बन गए, लेकिन कुछ दूसरे लोग ऐसे भी थे जिन्हें यह बात अच्छी नहीं लगी। उन्होंने सन्त पाल का विरोध किया। इस विरोध के बावजूद सन्त पाल अपने काम में कामयाब हुआ। उसने वहां पर एक गिरजाघर बनवाया। सन् २६२ में गोथ लोगों ने इफिसस पर हमला किया, उन्होंने नगर को तोड़-फोड़ डाला और डायना देवी के मन्दिर में आग लगा दी। गोथ लोगों के आक्रमण से डायना का रहा-सहा प्रभाव भी कम हो गया। इसके बाद कुछ लोगों ने जले हुए मन्दिर के पास ही देवी का एक छोटा-सा मन्दिर बनवाया, जिसे बाद में कुछ ईसाई लोगों ने नष्ट कर दिया। इतना ही नहीं देवी के जो बचे-खुचे उपासक थे उन्हें कड़ा दण्ड दिया। गया उसी समय रोमन साम्राज्य की ताकत फिर बढ़ गई और रोम के सम्राट् ने इस तरह के सभी मन्दिरों को बन्द करने का शाही फरमान निकाल दिया। इस तरह महान् डायना देवी, जिसने दुनिया

पर १५०० सालों तक अपना प्रभाव जमाए रखा, समाप्त हो गई ।

कहते हैं कि उसी समय इस महान् मन्दिर के खंडहरों पर एक बड़ा गिरजाघर बनवा दिया गया । नदी की बाढ़ ने इस नगर को बिल्कुल ही उजाड़ डाला और यह खंडहरों के अलावा कुछ न रहा । ११ वीं शताब्दी में यह जगह उन यूनानी लुटेरों का अड्डा बन गया था जो माल से लदे जहाज़ों को समुद्र में लूट लिया करते थे । ये जहाज़ी लुटेरे लूट का माल यहीं लाकर छिपाया करते थे । इसके दो सौ साल बाद तुर्क लोगों का प्रभाव बढ़ा और उन्होंने इस नगर को फिर से बसाया । इस बार गिरजाघर की जगह एक बड़ी मस्जिद बनवा दी गई । १३६५ में इफिसस पर जेरूसलम का अधिकार हो गया और एक बार फिर यहां पर ईसाई धर्म का बोलबाला हो गया । १४०२ में यह फिर से तुर्कों के हाथ में चला गया और अन्त तक उन्हीं के अधिकार में रहा । अब इस नगर के खंडहर भी जमीन में बहुत गहरे दब गए हैं और यहां पर कुछ झोपड़ियों का एक छोटा-सा गांव रह गया है, जो आज भी इफिसस और उसके डायना देवी के महान् मन्दिर की याद दिलाता है ।

सन् १८६३ में ब्रिटिश संगहालय के जे० टी० वुड ने टर्की की सरकार से इन खंडहरों की खुदाई करने की इजाजत हासिल की थी । छः साल तक वुड खंडहरों की खाक छानता रहा, उसे बड़े-बड़े मकानों, लम्बी-चौड़ी सड़कों, नगर के दरवाजों, गिरजाघरों, मस्जिद और बहुत-सी दूसरी चीज़ों के अवशेष तो मिल गए, लेकिन डायना देवी के महान् मन्दिर का निशान तक उसे नज़र न पड़ सका । बाद में एक सभा-भवन में उसे एक शिलालेख मिला जिसमें खुदा हुआ था कि हर साल मग्नेसियन दरवाज़े से देवी का जुलूस यहां आता था और वह कोरेसियन दरवाज़े से वापस मन्दिर में जाता था । इस सुराग के आधार पर उसने नगर से दूर बने हुए मस्जिद के खंडहरों की खुदाई करवाई । यह मस्जिद तुर्क लोगों ने वहां पर काफी बाद में बनवाई थी । खुदाई करने पर वुड को २९ दिसम्बर, १८६९ को जमीन के बीस फुट नीचे से कुछ टूटी-फूटी मूर्तियां, कुछ शिलालेख तथा उस आश्चर्यजनक मन्दिर की नींव मिली । १८७४ तक इस जगह की खुदाई होती रही और वहां के सभी अवशेष प्राप्त कर लिए गए । १९०९ में एक बार फिर ब्रिटिश संग्रहालय ने इस जगह की खोजबीन करवाई और इस बार वहां पर उन पुराने छोटे-छोटे मन्दिरों की नींव भी मिल गई जो इस आश्चर्यजनक मन्दिर के बनने से पहले इफिसस के लोगों ने बनवाए थे । मन्दिर के ये अवशेष आज भी ब्रिटिश संग्रहालय में बड़ी हिफाजत से रखे हुए हैं और आज भी हमें महान् डायना देवी और उसके आश्चर्यजनक मन्दिर की याद दिला रहे हैं ।



८

राजा मोसोलस की समाधि

जो कि एक नारी की पतिभक्ति का ज्वलन्त उदाहरण है

एशिया माइनर के दक्षिणी हिस्से में भूमध्य सागर के समानान्तर बहुत ऊंची-ऊंची पहाड़ियां हैं। पहाड़ियों और समुद्र के बीच की घाटी कभी पूरी दुनिया से अलग-थलग थी। पुराने जमाने में इसी घाटी में कारिया का साम्राज्य था। अब तो वह पुराना साम्राज्य टर्की के एक प्रान्त का छोटा-सा हिस्सा है। कारियन साम्राज्य के स्थापित होने से बहुत पहले यह घाटी जहाजी लुटेरों का गढ़ थी। जहाजी लुटेरे समुद्र में माल से लदे जहाजों का सामान लूटकर यहां आ जाते थे और इस घाटी के जंगलों में लूट का माल छिपा देते थे। कहते हैं कि शुरू-शुरू में फोनेशियन लोगों का एक दल इस घाटी में बस गया था और उन्होंने ही इसे बस्ती का रूप दिया था। लेकिन इस बात के सबूत मिलते हैं कि उन लोगों से पहले भी यहां पर कुछ और लोग बस गए थे। आज यह माना जाता है कि एशियाटिक लिलैगेस, जो बाद में कारियन कहलाए, सबसे पहले यहां आकर बसे और उन्होंने जेफीरिया द्वीप पर अपना पहला नगर बसाया। यहां पर आज सन्त पीटर का महल खड़ा हुआ है। इस बात के समर्थन में कहा जाता है कि क्रीट के प्रसिद्ध राजा माइनोस ने कारियन लोगों को यहां खदेड़ दिया था। यहां पर कारियन लोगों ने मिलासा नगर बसाया और बाद में इन लोगों ने हथियार बनाने में प्रसिद्धि पाई। ये लोग ही आगे चलकर एक इतने बड़े राष्ट्र के रूप में विकसित हो गए थे कि होमर तक ने उसका सम्मान किया था।

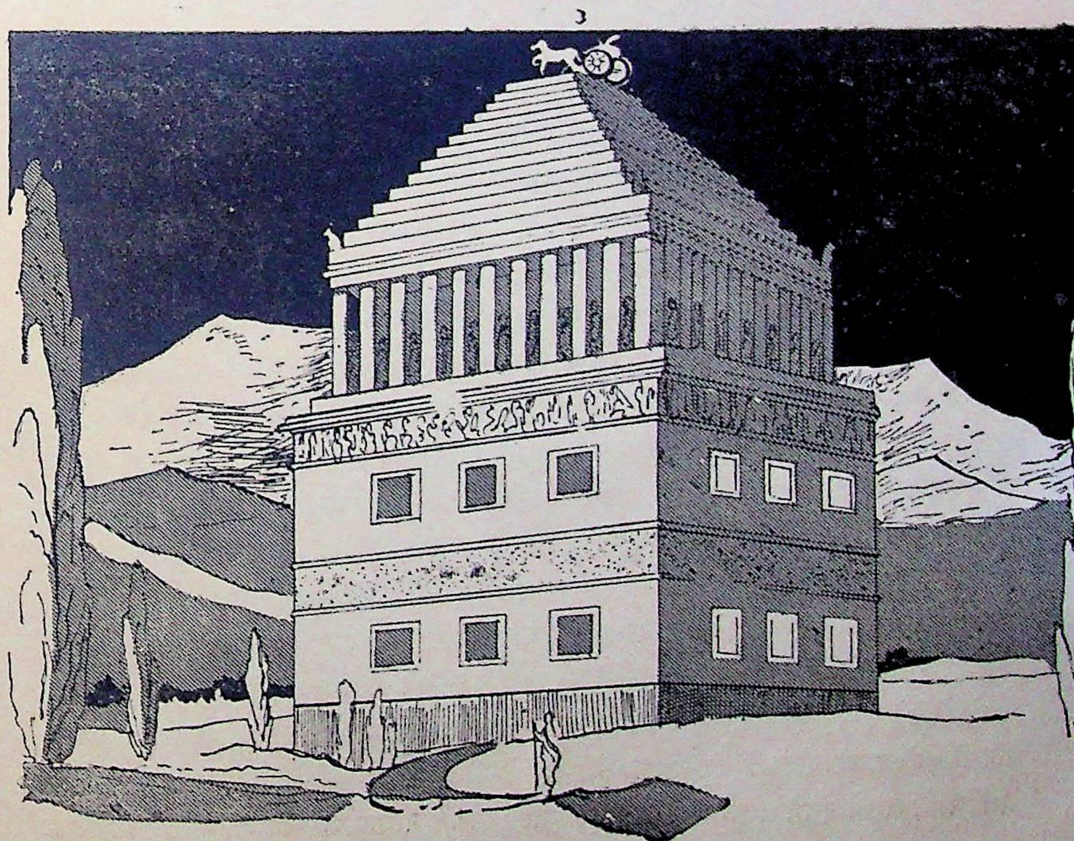
इसी घाटी में कारियन लोगों द्वारा बसाए गए नगर के पास ही उस जमाने में हैलीकारनसस नाम का एक नगर था। कुछ लोगों का कहना है कि हैलीकारनसस की स्थापना पोसीडौन नामक देवता के पुत्र एन्थेस ने की थी। यह भी कहा जाता है कि कुछ यूनानी लोग यहां बस गए थे और बाद में वे कारियन लोगों से घुल-मिल गए। इसी हैलीकारनसस नगर में महान् इतिहासकार हिरोडोटस पैदा हुआ था और यहां पर वह तब तक रहा था जब तक कि उसे देश निकाला नहीं हो गया था। अपने जमाने के इसी मशहूर नगर में दुनिया के सात आश्चर्यों की गिनती में आनेवाला एक अनोखा आश्चर्य मोसोलस की समाधि कभी खड़ा था।

मिलासा में बहुत-से स्वतन्त्र राजाओं ने शासन किया, लेकिन ३८७ ई० पू० में यह फारस के अधीन हो गया। उस समय के कारियन राजा हेक्टाटोमनस ने फारस की अधीनता स्वीकार कर ली। लेकिन जैसा कि हम शुरू में ही कह आए हैं, अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण यह पूरी दुनिया से अलग-थलग-सा ही था। इसलिए फारस का आधिपत्य होते हुए भी राजा एक स्वतन्त्र शासक के रूप में राज्य करता था। मोसोलस इसी हेक्टाटोमनस राजा का लड़का था। उसकी एक खूबसूरत बहिन भी थी, जिसका नाम आर्टिमीसिया था। हेक्टाटोमनस के ये दोनों ही बच्चे बहुत बुद्धिमान् और खूबसूरत थे और एक दूसरे से शुरू से ही बहुत प्रेम करते थे। जब दोनों बड़े हुए तो अपने इसी प्रेम के कारण उन्होंने आपस में शादी कर ली। शायद आप इस बात से चौंक गए हैं और आपके मन में उन दोनों के प्रति घृणा पैदा हो गई है। आप सोचने लगे होंगे कि भला बहिन भाई भी कहीं आपस में शादी करते हैं! लेकिन इस तरह चौंकने या उन दोनों से घृणा करने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि उस जमाने में बहिन-भाई का शादी करना बुरा नहीं माना जाता था। उस समय समाज में बहिन-भाई की शादी का रिवाज प्रचलित था और उसे किसी भी तरह बुरी नजर से नहीं देखा जाता था।

३७७ ई० पूर्व में राजा हेक्टाटोमनस के मरने के बाद मोसोलस गद्दी पर बैठा। हालांकि कारियन राज्य सिर्फ नाम के लिए ही फारस के अधीन था, फिर भी मोसोलस को यह बात गवारा नहीं हुई और उसने इस अधीनता के जुए को उतार फेंका तथा अपने आप को एक स्वतंत्र राजा घोषित कर दिया। इसके बाद उसने और भी कई द्वीपों को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। कारियन साम्राज्य ने जितनी तरक्की उसके जमाने में की उतनी वह और किसी राजा के काल में नहीं कर सका। मोसोलस ने मिलासा की जगह हैलीकारनसस को अपनी राजधानी बनाया और अपनी नई राजधानी में उसने कई खूबसूरत महल बनवाए। इस नई राजधानी को खूबसूरत बनाने के लिए उसने मिलासा के लोगों से बहुत-सा रुपया

कर के रूप में वसूल किया। ऐसा कहा जाता है कि इस पैसे में से कुछ तो उसने नगर को सुन्दर बनाने में खर्च कर दिया, लेकिन एक बड़ी राशि उसने अपने पास बचाकर रख ली, जिससे बाद में उसकी पत्नी ने आश्चर्यजनक समाधि बनवाई। उसने नगर के बीचोंबीच अपना महल बनवाया और बन्दरगाह को मजबूत बनवाया। बन्दरगाह से अपने महल तक उसने एक गुप्त नहर बनवाई, जिसमें होकर उसके जहाज आसानी से महल के अन्दर जा सकते थे। इस नगर की आबादी बढ़ाने के लिए उसने मिलासा के लोगों को यहां आकर बसने के लिए मजबूर किया। उसने नगर में कई थिएटर और मन्दिर बनवाए। उसने ऐसे चांदी के सिक्के चलाए जिनपर एक तरफ अपोलो की प्रतिमा थी और दूसरी तरफ जियस की।

३५३ ई० पू० में इस महान् कारियन राजा की मृत्यु हो गई। राजा की मृत्यु से उसकी



पत्नी आर्टिमीसिया को बहुत दुःख हुआ। आर्टिमीसिया ने अपने पति का दाह संस्कार बहुत सम्मान के साथ किया। कहते हैं कि कई दिनों तक पूरे राज्य में राजा की मृत्यु का शोक मनाया गया। उस समय के मशहूर कवि, प्लेटो के शिष्य और अरस्तू के दोस्त थियोडेक्टेस ने राजा के सम्मान में बहुत भावपूर्ण कविता पढ़ी थी और उसे इस कविता पर आर्टिमीसिया ने इनाम भी दिया था। मोसोलस के बाद उसकी पत्नी आर्टिमीसिया गद्दी पर बैठी। उसने गद्दी पर बैठते ही यह तय किया कि वह अपने पति की एक ऐसी समाधि बनवाएगी जिससे उसका पति पूरी दुनिया में अमर हो जाए। हालांकि खूबसूरत हैलीकारनसस खुद राजा का एक अच्छा स्मारक था, तथापि रानी को इससे सन्तोष न हुआ। उस जमाने में मिस्र की तरह कारिया में भी यह रिवाज था कि राजा अपने सामने ही अपनी समाधि खुद बनवाना शुरू कर देता था, इसी आधार पर यह भी माना जाता है कि मोसोलस ने भी अपने सामने ही अपनी समाधि बनानी शुरू कर दी होगी।

राजा की समाधि बनवाने के लिए नगर के मार्स मंगल के मन्दिर के पास का स्थान चुना गया। उस जमाने के मशहूर भवन-निर्माता सेटीरोस और पिथिस को यह स्मारक बनाने के लिए चुना गया। मशहूर मूर्तिकार स्कोपास, लियोचारेस, बियाक्सीस और टिमोथियस को मूर्तियां बनाने का काम सौंपा गया। आर्टिमीसिया ने अपने पति का स्मारक बनवाना शुरू ही किया था कि तभी रोडस के राजा ने हैलीकारनसस पर हमला कर दिया। वह सोचता था कि भला एक नारी कैसे एक राज्य की बागडोर संभाल सकती है! उसे अपनी जीत की पूरी उम्मीद थी। आर्टिमीसिया को जब रोडस के राजा के हमले की बात पता चली तो उसने अपने जहाजी बेड़े को गुप्त नहर में छिपा दिया और कुछ सैनिकों को नगर की दीवार पर तैनात कर दिया जब रोडस के सैनिकों के जहाज हैलीकारनसस के बन्दरगाह पर लगे तो दीवार पर तैनात सैनिकों ने इस तरह का अभिनय किया कि जैसे उन्होंने रोडस की अधीनता स्वीकार कर ली हो। रोडस के सैनिक बड़े आराम से जहाजों से उतरे और नगर पर अपना कब्जा करने के लिए आगे बढ़े, यह सोचते हुए कि आखिर आर्टिमीसिया ने हथियार ही डाल दिए। लेकिन आर्टिमीसिया इतनी आसानी से हथियार डालनेवाली कहां थी! जैसे ही रोडस के सैनिक अपने जहाजों से उतरकर नगर की तरफ बढ़े वैसे ही आर्टिमीसिया अपने छिपे हुए जहाजी बेड़े को लेकर उनके जहाजों के पास जा पहुंची और उनपर कब्जा कर लिया। उधर दीवारों पर तैनात सैनिकों ने रोडस के सैनिकों की धज्जियां उड़ा दीं। आर्टिमीसिया को इतने से ही सन्तोष नहीं हुआ। उसने रोडस के जहाजों में अपने सैनिक

सवार किए और वह रोडस की तरफ रवाना हो गई। जब जहाज रोडस पहुंचे तो रोडस-वासियों ने सोचा कि उनके सैनिक कारिया को जीतकर वापस लौट रहे हैं, अतः उन्होंने खुशी से जहाजों का स्वागत किया, लेकिन जल्दी ही उन्हें अपनी गलती मालूम हो गई क्योंकि उनके नेताओं को आर्टिमीसिया के सैनिकों ने तुरन्त मौत के घाट उतार दिया और द्वीप पर अपना कब्जा कर लिया। आर्टिमीसिया ने इस जीत की खुशी में अपनी एक पीतल की विशाल प्रतिमा रोडस में लगवाई। यह प्रतिमा आर्टिमीसिया के मरने के समय तक वहां लगी रही, लेकिन बाद में जब द्वीप स्वतन्त्र हो गया तो लोगों ने उसे हटा दिया।

इस बीच मोसोलस की समाधि बनने का काम जारी था। रानी ने खुद अपनी देखरेख में इस समाधि का बहुत-सा भाग बनवाया, लेकिन वह उसे अपने जीवन-काल में ही पूरा न करवा सकी। समाधि के पूरा होने से बहुत पहले ही उसकी मृत्यु हो गई और ३५१ ई० पू० में, अर्थात् अपने पति की मृत्यु के दो साल बाद ही उसे भी उसके पति के पास ही दफना दिया गया। आर्टिमीसिया के मर जाने से समाधि का काम नहीं रुका। चारों मूर्ति-कारों में से हरेक को इस समाधि का एक-एक हिस्सा सजाने के लिए दे दिया गया था और रानी उन्हें समाधि का काम चालू रखने के लिए काफी धन दे गई थी। हरेक कलाकार अपने हिस्से को दूसरे सभी कलाकारों से अच्छा बनाने की कोशिश कर रहा था। इस तरह उन चारों मूर्तिकारों में अपना-अपना हिस्सा सुन्दर बनाने की एक होड़-सी लग गई थी। कुछ दिनों तक तो यह काम बिना किसी रुकावट के चलता रहा, लेकिन बाद में एक समय ऐसा भी आया जब रानी के द्वारा दिया गया सारा धन खत्म हो गया। तब ऐसा लगा कि यह महान् समाधि अब अधूरी ही रह जाएगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। असल में अब यह उन मशहूर कलाकारों की इज्जत का सवाल बन गया था जो इसे बना रहे थे और उन्होंने 'कला कला के लिए' का सिद्धान्त मानते हुए अपना काम जारी रखा। यह तो आप जानते ही हैं कि कलाकार को पैसे से भी बढ़कर अपनी कलाकृति प्रिय होती है, फिर पुराने ज़माने के वे महान् कलाकार अपनी ही कृति को अधूरा कैसे छोड़ सकते थे। बरसों की मेहनत के बाद यह अनोखी सनाधि बनकर तैयार हुई जो पूरी दुनिया के लिए महान् आश्चर्य बन गई। राजा मोसोलस के नाम पर ही यह मोसोलियम कहलाई।

इस समाधि को बनाने के लिए पहले ज़मीन की चट्टानी सतह को हमवार किया गया और बाद में इसकी १५ फुट गहरी नींव खोदी गई। मुख्य समाधि बनाने से पहले एक विशाल चारदीवारी बनाई गई। यह पूरी समाधि संगमरमर पत्थर की बनाई गई थी।

चारदीवारी को तरह-तरह की मूर्तियां खोदकर सजाया गया था। इसके बीच में १४० फुट ऊंचे संगमरमर के खम्भे खड़े किए गए थे। इन खम्भों की एक खास बात यह थी कि ये नीचे से काफी मोटे थे और ऊपर को पतले होते चले गए थे। जब कलाकारों ने देखा कि सादे खम्भे अच्छे नहीं लगते तो उन्होंने तरह-तरह की संगमरमर की मूर्तियों की खुदाई इन-पर की। इस समाधि की दीवारों पर मोसोलस की खास-खास लड़ाइयों को चित्रित किया गया था। समाधि को सीढ़ियों के रूप में बनाया गया था। समाधि के बाहर बरामदे में एक घुड़सवार की खूबसूरत मूर्ति बनाई गई थी, क्योंकि मोसोलस को घुड़सवारी का बहुत शौक था। इसकी एक ओर एक खूबसूरत बगीचा भी लगाया गया था। समाधि की चोटी पर एक विशाल रथ बनाया गया था, जिसमें राजा और रानी, दोनों की प्रतिमाएं थीं। यह रथ करीब २६ फुट लम्बे एक मंच पर बनाया गया था। इस रथ के पहिये सात फुट सात इंच अर्द्धव्यास के थे। हाल की ही खुदाई में इस रथ का करीब एक चौथाई हिस्सा ज्यों का त्यों मिल गया है और उसे देखकर पता चलता है कि इस समाधि को बनाने में कलाकारों ने कितनी बुद्धिमानी से काम लिया था। यह पुराने ज़माने की श्रेष्ठतम मूर्तिकला का एक बेमिसाल नमूना माना जा सकता है। राजा मोसोलस की प्रतिमा नौ फुट दस इंच ऊंची है। रानी की प्रतिमा राजा की प्रतिमा से १४ इंच छोटी बनाई गई थी। खुदाई में मिली राजा मोसोलस की प्रतिमा को देखने से पता चलता है कि वह एक वीर और साहसी राजा रहा होगा। उसकी घनी भौहें तथा गम्भीर आंखें उसके दृढ़निश्चयी होने का सबूत देती हैं। उसके चेहरे पर बहुत छोटी पर घनी दाढ़ी बनाई गई है और उसके लम्बे बाल कन्धों तक लटकते हुए दिखाए गए हैं। दुर्भाग्य से रानी की प्रतिमा खराब हो गई है और उसमें उसका चेहरा साफ दिखाई नहीं देता। हालांकि यह समाधि संगमरमर पत्थर की बनाई गई थी, फिर भी इसमें जो प्रतिमाएं बनाई गई थीं उन्हें सजीव बनाने के लिए शरीर को स्वाभाविक रंग देने की कोशिश की गई थी। राजा की प्रतिमा की आंखें और बाल काले ही बनाए गऐ थे और कपड़े चमकीले रंगों के। इसका मतलब यह हुआ कि इस समाधि की प्रतिमाओं को बनाने में जरूरत के मुताबिक रंग-बिरंगे पत्थरों का इस्तेमाल किया गया था। इसमें कुछ शेर और घोड़े भी बनाए गए थे, जिन्हें उनके स्वाभाविक रंगों में रंगा गया था।

समाधि के अन्दर राजा के शव को दफनाने के लिए एक कमरा बनाया गया था और उस कमरे में जाने के लिए एक संकरा रास्ता बनाया गया था। राजा को उसके पूरे साजोसामान के साथ दफनाने के बाद इस रास्ते को एक बड़े पत्थर से बन्द कर दिया गया

था, जिससे लुटेरे राजा के साथ दफनाए गए खजाने व सामान को न चुरा ले जाएं। रानी की मृत्यु के बाद उसका शव भी इसी जगह दफना दिया गया।

आर्टिमीसिया की मौत के बाद उसका भाई इड्रियस गद्दी पर बैठा और उसने अपनी एक दूसरी बहन एडा से शादी की। इड्रियस के मरने के बाद उसकी रानी ने सिकन्दर महान् के सामने यह प्रस्ताव भेजा था कि वह उसे अपने लड़के की तरह गोद लेना चाहती है, लेकिन सिकन्दर ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। एडा के बाद शायद उसका एक अन्य भाई हैलीकारनसस की गद्दी पर बैठा, लेकिन आर्टिमीसिया के बाद कारिया वंश का कोई योग्य उत्तराधिकारी न हो सका। इधर सिकन्दर का प्रभाव भी पूरी दुनिया में बढ़ता जा रहा था। बाद में सिकन्दर ने कारिया को जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। सिकन्दर के बाद और भी कई विदेशी राजाओं ने काफी समय तक कारिया को अपने अधीन बनाए रखा। लेकिन इन सब परिवर्तनों के बावजूद मोसोलस की समाधि दुनिया के लिए आश्चर्य बनी खड़ी रही। दूर-दूर से लोग इस अनोखी समाधि को देखने आते रहते थे।

ईसाई धर्म के उदय के साथ ही हैलीकारनसस करीब-करीब उजाड़ हो गया और इस खूबसूरत समाधि की देखभाल करनेवाला भी कोई न रहा। ऐसा कहते हैं कि कई विदेशी लुटेरे इसकी बहुत-सी मूर्तियां उखाड़कर ले गए। एक बार फिर इस नगर को बसाने की कोशिशें की गईं और यहूदी लोगों ने यहां पर अपना एक मन्दिर भी बनवाया, लेकिन कारियन लोगों की यह महान् राजधानी दुनिया के इतिहास में फिर से कोई खास स्थान न बना सकी। एक समय ऐसा आया कि जब यह बिलकुल ही भुला दी गई और इसके पुराने गौरव का प्रतीक यह स्मारक ही यहां खड़ा रह गया। बारहवीं शताब्दी तक यह समाधि ज्यों की त्यों खड़ी रही, उस जमाने के एक यात्री ने लिखा है कि "यह अभी भी दुनिया का एक महान् आश्चर्य बनी हुई है।" सन् १४०२ में एक भयानक भूचाल आया जिसने समाधि के ऊपर बने हुए रथ को नीचे गिरा दिया और बाद में यह रथ जमीन के नीचे दब गया। कुछ समय बाद तो यह पूरी समाधि ही एक खंडहर मात्र रह गई।

उसी साल हैलीकारनसस पर जेरूसलम का अधिकार हो गया। इन लोगों ने वहां पर सन्त पीटर का महल बनवाया, जो आज भी वहां खड़ा हुआ है। कहते हैं कि इस महल के बनाने के लिए जो पत्थर काम में लाए गए थे वे इस समाधि से ही प्राप्त किए गए थे। सिमेंट बनाने के लिए समाधि के खुदाई किए हुए पत्थरों को गला दिया गया। इसके बावजूद समाधि का निचला हिस्सा बचा रहा। इसके बाद किस तरह यह समाधि हमेशा के लिए

खत्म हो गई, इसकी एक कहानी प्रचलित है जो सही मालूम पड़ती है। इस कहानी के अनुसार सन् १५४२ में, जबकि सुल्तान सुलेमान रोडस पर चढ़ाई करने की तैयारियां कर रहा था, जेरूसलम से कुछ सेना भेजी गई, जिससे हैलीकारनसस में बने सन्त पीटर के महल की रक्षा की जा सके। जेरूसलम के सैनिकों ने हैलीकारनसस (जिसका नाम उन्होंने बदलकर मेसी कर दिया था) की किलेबन्दी करने के लिए समाधि के बचे-खुचे पत्थर भी निकाल लिए और इस तरह दुनिया का यह आश्चर्य हमेशा के लिए खत्म हो गया। जब ये लोग इस समाधि के पत्थर निकाल रहे थे तो एक पत्थर हटाने पर उन्हें एक सुरंग-सी दिखाई दी। वे इस सुरंग में मोमबत्ती जलाकर घुसे तो आगे जाकर उन्हें एक कमरा मिला, जिसमें बहुत-से हीरे-जवाहरात रखे थे तथा उसकी दीवारों तथा खम्भों पर बहुत कलापूर्ण खुदाई की गई थी। उन लोगों ने कला के इन बेशकीमती नमूनों को तोड़-फोड़ डाला और उनके पत्थर को किलेबन्दी के काम में ले लिया। इस तरह रोडस के इन नाइटों ने २२४७ साल पुरानी इस आश्चर्यजनक समाधि को तहस-नहस कर डाला। लेकिन जिसलिए उन्होंने इस समाधि को तोड़ा था उस काम में उन्हें सफलता नहीं मिल सकी। तुर्कों के हाथों उन्हें करारी हार खानी पड़ी और बाद में तो तुर्कों ने उन्हें पूरी तरह से एशिया से ही खदेड़ दिया।

कहते हैं कि इसके बाद लोग यह भी भूल गए कि मोसोलस की यह आश्चर्यजनक समाधि किस जगह पर थी। सन् १६६५ में एक फ्रेंच यात्री टर्की के बुड्रम गांव गया था, जहां कभी हैलीकारनसस नगर बसा हुआ था। वहां पर उसने संगमरमर के वे पत्थर देखे थे जो जेरूसलम के नाइटों ने सन्त पीटर का महल बनाने के लिए समाधि में से निकाल लिए थे। बाद में सन् १८४६ में टर्की सरकार से आज्ञा लेकर कुछ अंग्रेज वहां गए थे और उन्होंने थोड़ी-बहुत खोज की थी, लेकिन १८५५ में ही हैलीकारनसस नगर के खंडहरों की खुदाई हो सकी। जनवरी, १८५७ में खुदाई का काम तेजी से शुरू कर दिया गया। इस खुदाई में उस जमाने की बहुत-सी चीजों के साथ उस समाधि के अवशेष भी मिले। इस खुदाई में मिली हुई चीजें आज भी ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित रखी हुई हैं। करीब पचास साल तक इन चीजों का अध्ययन करने के बाद विशेषज्ञ लोग यह जानने में सफल हुए कि इस समाधि का रूप क्या रहा होगा। इस आधार पर ही उन्होंने मोसोलस की समाधि का एक नक्शा भी बनाया। बाद में इसी नक्शे के आधार पर अमरीका में एक मन्दिर भी बनवाया गया। अमरीका का यह मन्दिर और ब्रिटिश संग्रहालय में रखे हुए अवशेष आज भी हमें रानी आर्टिमीसिया के अपने पति के प्रति अमर प्रेम की याद दिला रहे हैं।



६

रोडस की विशाल मूर्ति

जोकि महान् कला का अद्भुत नमूना है

एशिया माइनर के दक्षिण-पश्चिम में रोडस एक बड़ा द्वीप है। इस द्वीप के बीच से ऊंची-ऊंची पहाड़ियों की एक श्रेणी चली गई है। ये पहाड़ियां इतनी ऊंची हैं कि इनकी चोटी से दक्षिण की ओर स्थित क्रीट साफ दिखाई देता है। किसी जमाने में इस जगह बहुत घने जंगल थे, लेकिन बाद में तुर्क लोगों ने इन जंगलों को जला डाला। अपनी खास जलवायु के कारण यह द्वीप हमेशा से ही मशहूर रहा है और अंगूर, सन्तरे आदि फल हमेशा से ही यहां बहुतायत से पैदा होते रहे हैं। इतिहास में इस बात का कोई जिक्र नहीं मिलता कि इस द्वीप पर सबसे पहले कौन लोग आकर बसे थे, लेकिन यह बात तय है कि होमर द्वारा ट्राय की वीरता के गीत गाए जाने से सैकड़ों बरस पहले से ही यह द्वीप आबाद रहा है। कुछ लोगों का मानना है कि टेलचीनेस जाति के लोग, जो अपने धातु के काम के लिए बहुत मशहूर थे, इस जगह सबसे पहले आकर बसे। उनके बाद अरगोस से कुछ यूनानी लोग यहां आकर बस गए। इन्हीं यूनानी लोगों ने यहां पर नगर बसाए और व्यापार के लिए मजबूत बन्दरगाह बनाए। बाद में इस द्वीप की खुशहाली से आकर्षित होकर और भी बहुत-से लोग यहां पर आए। इस द्वीप के उत्तर-पूरब में एक बड़ा बन्दरगाह है। ४०८ ई० पू० में इस बन्दरगाह के किनारे रोडस नगर बसाया गया। हिप्पोडैमुस नाम का एक मशहूर भवन-निर्माता इस नगर का नक्शा बनाने के लिए चुना गया। यहां पर रोडसवासियों ने अपनी नई राजधानी बनाई। राजधानी की सुरक्षा के लिए बहुत मजबूत चारदीवारी बनवाई गई और कई बड़े-बड़े महल भी बनवाए

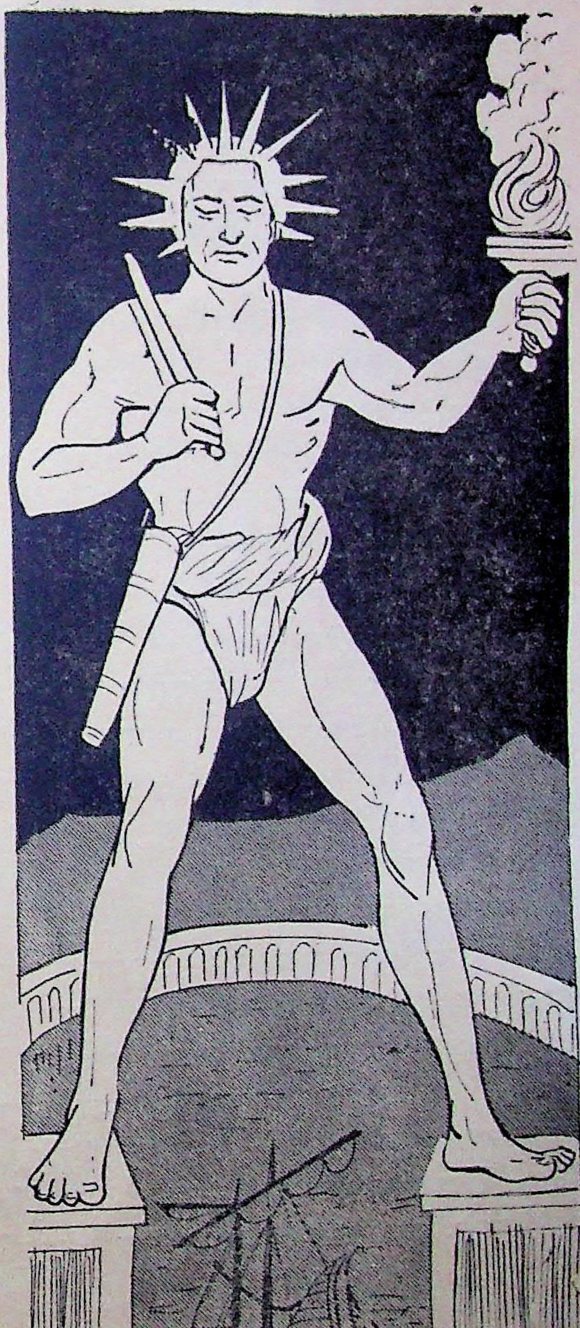
गए। अपने सूर्यदेवता हेलिओस (जिसे अपोलो भी कहा जाता है) के लिए उन्होंने एक सुन्दर मन्दिर भी बनवाया।

इस नये नगर की आबादी बढ़ाने के लिए आसपास के नगरों के लोगों को लाकर यहां बसाया गया। रोडस की खुशहाली ने विदेशी राजाओं का ध्यान अपनी ओर खींचा और इसी कारण यह बहुत कम समय तक स्वतन्त्र रह सका। पहले यह स्पार्टा के अधीन हो गया। बाद में एथेन्स ने इसपर कब्जा कर लिया। जब हैलीकारनसस के राजा मोसोलस की मृत्यु हो गई और रानी आर्टिमोसिया गद्दी पर बैठी तो रोडसनिवासियों ने सोचा कि हैलीकारनसस को जीतकर अपने अधीन करने का यह अच्छा मौका है। यही सोचकर उन्होंने हैलीकारनसस के खिलाफ अपने जहाजी बेड़े को कूच का हुक्म दे दिया, लेकिन इसका नतीजा उलटा ही निकला। रानी आर्टिमीसिया ने अपनी चालाकी से इस द्वीप को अपने अधीन कर लिया। उसने रोडस नगर में अपनी एक प्रतिमा भी बनवाई, जो काफी समय तक यहां खड़ी रही। ३४० ई० पू० में इसपर फारस ने अधिकार कर लिया और आठ सालों तक इसपर उनका ही आधिपत्य रहा। लेकिन तभी दुनिया में एक नई ताकत का उदय हुआ, यह ताकत थी सिकन्दर महान् की, जो सारी दुनिया को जीतने का सपना देख रहा था। सिकन्दर ने ३३२ ई० पू० में रोडस को जीतकर अपने साम्राज्य में मिला लिया। लेकिन सिकन्दर की मौत के बाद यहां के लोगों ने यूनानी अधीनता स्वीकार करने से इन्कार कर दिया और एक बार फिर रोडस आजाद हो गया।

सिकन्दर की मौत के बाद उसका एक सेनापति एण्टीगोनस मक्दूनिया की गद्दी पर बैठा। उसी समय उसका मिस्र के राजा से किसी बात को लेकर झगड़ा हो गया। इस झगड़े का नतीजा यह हुआ कि एण्टीगोनस ने मिस्र के राजा के खिलाफ लड़ाई छेड़ दी। ऐसी हालत में एक बार फिर रोडस की खुशहाली खतरे में पड़ गई, क्योंकि मिस्र के हार जाने पर उसके जहाजों को ढोने के लिए अनाज कहां से मिलता। इसी बात को ध्यान में रखकर रोडस के जहाजी बेड़े भी मिस्र के राजा की मदद को भेजे गए और एण्टीगोनस तथा उसकी विशाल सेना को खदेड़ दिया गया।

इस तरह मिस्र की हार बच जाने से रोडस के व्यापार को तो कोई नुकसान नहीं पहुंचा था, लेकिन मिस्र का साथ देने की वजह से एण्टीगोनस के लड़के डिमीट्रियस ने रोडस से बदला लेने की सोची। डिमीट्रियस रोडस को मिस्र के राजा का साथ देने का मजा चखाना चाहता था और इसी उद्देश्य से उसने रोडस पर चढ़ाई कर दी। वह अपने सैनिकों को ३७०

जहाजों में भरकर रोडस आ पहुंचा। इन जहाजों में वह अपने ४० हज़ार सैनिक लाया था। इतनी विशाल सेना को देखते हुए एक बार तो ऐसा लगा कि रोडस बुरी तरह हार जाएगा क्योंकि रोडस की कुल जनसंख्या ही सात हज़ार थी। रोडसवासियों ने अपने दासों और कैदियों को भी हथियार दे दिए और उनसे कहा कि अगर इस लड़ाई में विजय मिल गई तो उन्हें स्वतन्त्र कर दिया जाएगा। रोडस का बच्चा-बच्चा इस लड़ाई के लिए कमर कसकर तैयार हो गया, क्योंकि यह न केवल उनकी इज़्ज़त का सवाल था बल्कि अस्तित्व का सवाल भी बन गया था।



डिमीट्रियस के सैनिकों ने एक जगह से रोडस की चारदीवारी को तोड़ डाला, लेकिन रोडस-वासियों ने उन्हें नगर के अन्दर नहीं घुसने दिया। अब रोडस-वासियों ने अपने मन्दिरों और सभागृहों को तोड़ डाला और उनके तोड़ने से जो पत्थर वगैरह उन्हें मिला उससे उन्होंने नगर की एक दूसरी चारदीवारी बनाने

का काम शुरू कर दिया। इसी समय जबकि रोडस के लोग किसी तरह अपने शक्तिशाली दुश्मन को नगर के बाहर ही रोके हुए थे मिस्र का राजा अपनी बड़ी सेना लेकर रोडस की मदद को आ गया। मिस्र की सेनाओं के आ जाने के बाद भी पूरे एक साल तक लड़ाई चलती रही। आखिर मिस्र और रोडस की मिली-जुली सेनाओं ने डिमीट्रियस के हौसले पस्त कर दिए और उसे वापस मक्दूनिया चले जाना पड़ा। जल्दी-जल्दी में वह अपने बहुत-से हथियार तथा इंजन वहीं छोड़ गया। इस तरह रोडस मक्दूनिया के अधीन होने से बच गया।

रोडस के लोग फिर हंसी-खुशी से रहने लगे। उनके जहाज फिर से सिकन्दरिया से अनाज भरकर दुनिया के हरेक कोने में ले जाने लगे। इस जीत की खुशी में रोडसवासियों ने अपने सूर्यदेव अपोलो की एक विशाल मूर्ति बनवाने का फैसला किया, क्योंकि उनका मानना था कि यह विजय उन्हें अपने आराध्य देव अपोलो के प्रताप से ही मिली थी। कुछ लोगों का ऐसा मानना है कि मक्दूनिया के राजा डिमीट्रियस ने रोडसवासियों से आखिर में एक संधि कर ली थी और इस संधि के मुताबिक उसे बहुत-सा धन रोडसवासियों को देना पड़ा था। बाद में इस धन से अपोलो की विशाल मूर्ति बनवाई गई। लेकिन ऐतिहासिक तथ्यों को देखते हुए यह बात सही नहीं लगती। असल में डिमीट्रियस ने कोई संधि नहीं की थी, वह तो अपनी सेनाएं लेकर वापस मक्दूनिया चला गया था। हां, जो हथियार तथा लड़ाई के बड़े-बड़े इंजन वह रोडस में ही छोड़ गया था, उन्हींको गलाकर विजय की खुशी में अपोलो की वह विशाल मूर्ति बनाई गई, जो हमेशा-हमेशा के लिए दुनिया-भर में एक महान् आश्चर्य बन गई।

इस मूर्ति को बनाने का काम चारेस नामक कलाकार को सौंपा गया। उसने इस मूर्ति से पहले अपोलो तथा दूसरे देवताओं की कई सजीव मूर्तियां बनाई थीं और जिनकी वजह से उसका नाम दूर-दूर तक फैल गया था। उसके द्वारा बनाया गया अपोलो का रथ तब तक काफी मशहूर हो चुका था यह रथ २५ फुट ऊंचा बनाया गया था। चारेस द्वारा बनाई गई इस मूर्ति के बारे में आज बहुत कम जानकारी मिलती है, लेकिन जो भी जानकारी मिलती है उसीके आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चारेस ने अपोलो की जो विशाल मूर्ति बनाई वह अपने जमाने की कला का एक अद्भुत नमूना थी। लगातार बारह सालों तक वह भूख-प्यास भुलाकर अपोलो की यह अनोखी मूर्ति बनाने में लगा रहा और आखिर २८० ई० पू० में उसका यह महान् काम पूरा हुआ। यह मूर्ति पीतल की बनाई गई थी। इस मूर्ति को लगाने के लिए समुद्र का किनारा चुना गया। यह मूर्ति समुद्र के किनारे किस तरह लगाई

गई थी, इस बारे में दो तरह की बातें सुनने को मिलती हैं। एक मत के अनुसार रोडस के दोनों बन्दरगाहों पर दो ५०-५० फुट चौड़ी दीवारें बनाई गई थीं और इस मूर्ति का एक पांव एक दीवार पर तथा दूसरा पांव दूसरी दीवार पर टिकाया गया था। बन्दरगाह के अन्दर आनेवाले जहाज अपोलो की इस मूर्ति के नीचे से होकर आया करते थे। लेकिन दूसरे मत के अनुसार यह मूर्ति इन दो दीवारों पर टिकी न होकर बन्दरगाह के किनारे स्थापित की गई थी।

अपोलो की इस मूर्ति की ऊंचाई १२५ फुट थी। अन्दर से यह खोखली थी और इसके सिर तक पहुंचने के लिए इसके अन्दर घुमावदार सीढ़ियां बनी हुई थीं। लोग इन सीढ़ियों से ऊपर चढ़ सकते थे। मूर्ति के सिर में एक छेद भी था, जिसके द्वारा दूर आते हुए जहाजों को देखा जा सकता था। एक पुरानी किंवदन्ती के अनुसार मूर्ति के सिर के हिस्से में प्रकाश की व्यवस्था थी, जो आने-जाने वाले जहाजों का समुद्र में मार्गदर्शन करती थी। इस मूर्ति का अब कोई आधिकारिक चित्र प्राप्त नहीं होता और जो तथ्य मिलते हैं वे इतने कम हैं कि इसके बारे में सही अन्दाज लगाना बड़ा मुश्किल काम है। हम सिर्फ इतना ही जानते हैं कि जल्दी ही यह दुनिया-भर में मशहूर हो गई।

रोडस की यह अनोखी मूर्ति समुद्र के किनारे होने की वजह से दुनिया के दूसरे आश्चर्यों के मुकाबले जल्दी ही नष्ट हो गई। रोडस में भूचाल अक्सर आते रहते थे। मूर्ति की स्थापना के ५६ साल बाद एक इतने जोर का भूचाल आया कि उसने पूरे रोडस द्वीप को ही हिलाकर रख दिया। उसी साल अर्थात् २२४ ई० पू० में यह मूर्ति भी जमीन पर आ गिरी। ऐसा माना जाता है कि इस विशाल मूर्ति को टिकाने के लिए जो मंच बनाया गया था वह काफी मजबूत नहीं था। इसी कारण वह ज्यादा दिनों तक इतनी भारी मूर्ति का बोझ न संभाल सका। जमीन पर पड़ी हुई यह मूर्ति एक बड़े दैत्य के समान लगती थी। चूंकि यह मूर्ति पूरी दुनिया में प्रसिद्ध हो चुकी थी, इसलिए इसके गिर जाने पर सभीको बहुत दुःख हुआ। तभी इस मूर्ति को फिर से इसकी पुरानी जगह लगाने की बात भी उठी। यूनान, मिस्र और यहां तक कि मक्दूनिया तक के राजाओं ने इस मूर्ति को इसकी पुरानी जगह लगाने में रोडस-वासियों को मदद देने का प्रस्ताव किया। कुछ लोगों का तो मानना है कि एक बार फिर से मूर्ति को खड़ी करने की कोशिशें भी की गई थीं, लेकिन कामयाबी न मिल सकी। इसके विपरीत एक मत यह भी है कि ईश्वर की इस बारे में इच्छा जनने के लिए पुजारियों को तैनात किया गया था और कुछ आपसी द्वेष के कारण पुजारियों ने इस मूर्ति को फिर से खड़ी करने

को मना कर दिया।

इस भूचाल से रोडस नगर को भी बहुत नुकसान पहुंचा था। यहां का व्यापार करीब-करीब खत्म हो गया था और बहुत कम लोग ही वहां रह गए थे। लेकिन फिर भी यह मूर्ति वहां धरती पर ज्यों की त्यों पड़ी रही। विदेशी यात्रियों ने इसे भूचाल के तीन सौ साल बाद तक वहां पड़ी हुई देखा। ४३ ई० पू० में रोमन लोगों ने रोडस से कुछ धन की मांग की, लेकिन रोडसवासियों ने वह देने से मना कर दिया। इसपर अगले साल ही इसे रोमन साम्राज्य का हिस्सा बना लिया गया और इसके जहाजों को जला दिया गया। सन् १५५ में एक अन्य भूचाल ने इस नगर को पूरी तरह ही नष्ट कर दिया। सन् ६५३ में अरब लोगों ने इसपर कब्जा कर लिया। उस समय तक यह मूर्ति वहां पर ज्यों की त्यों पड़ी हुई थी। सन् ६७२ में अरबों ने इस मूर्ति को एक यहूदी व्यापारी के हाथ बेच दिया। यह कहा जाता है कि उस व्यापारी ने मूर्ति को तुड़वा डाला और उससे मिले पीतल को वह ऊंटों पर लादकर लौरीमा ले गया, जहां पर उसने इसे तलवार बनाने वालों को बेच दिया। कहते हैं कि इस पीतल को ले जाने के लिए उसे नौ सौ ऊंटों की जरूरत पड़ी थी। यह अनुमान लगाया जाता है कि मूर्ति से प्राप्त कुल पीतल का वजन ३६० टन था। इस बात से ही अन्दाज लगाया जा सकता है कि यह मूर्ति कितनी विशाल रही होगी। कहते हैं कि इसके हाथ का अंगूठा दोनों हाथों से एक साथ पकड़ने की कोशिश करने पर भी पकड़ में नहीं आता था।

बाद में इस द्वीप पर क्रमशः बेनीटियन और इटैलियन लोगों का अधिकार रहा। सन् १३०९ में जेरूसलम के नाइटों ने इसपर अपना कब्जा कर लिया। उन्होंने रोडस नगर को फिर से बसाया, लेकिन तब तक उस महान् मूर्ति का वहां कोई नामोनिशान बाकी न रहा था। यहां तक कि लोग यह भी भूल गए थे कि यह विशाल मूर्ति किस जगह खड़ी थी। सन् १५२२ में टर्की के सुल्तान सुलेमान ने अपने दो लाख सैनिकों को लेकर इस द्वीप पर हमला बोल दिया। जेरूसलम के नाइट बहुत बहादुरी से लड़े, लेकिन अन्त में उनकी हार हो गई और इस तरह यह तुर्कों के हाथ में आ गया। उसके बाद से ही यह द्वीप मुसलमानों के हाथो में रहा है। रोडस नगर आज भी मौजूद है, लेकिन अब तो इस पूरे द्वीप की जनसंख्या कुल ३० हजार है। पुराने जमाने के बहुत-से अवशेष वहां पर मिले हैं, लेकिन उस आश्चर्य-जनक मूर्ति की तो बस अब कहानी ही बाकी रह गई है।



७

सिकन्दरिया का प्रकाश-स्तम्भ

जो सैकड़ों वर्षों तक जहाज़ों का मार्ग-दर्शन करता रहा

मिस्र के बाहर की ओर, जहां नील नदी की पश्चिमी शाखा भूमध्य सागर में जाकर गिरती है, कभी एक छोटा-सा द्वीप था। यहां की जमीन इतनी पथरीली थी और उसमें समुद्र का नमक इतनी ज्यादा मात्रा में मिल गया था कि वहां पर अंजीर के अलावा और कुछ पैदा ही नहीं होता था। यहां पर अंजीर के पेड़ इतनी ज्यादा तादाद में थे कि यहां के लोग इसका पुराना नाम भूलकर इसे अंजीर का बाग ही कहने लगे थे। इस द्वीप के आसपास का समुद्र बहुत संकरा था और उसमें बड़ी-बड़ी चट्टानें थीं, जिस वजह से यहां आनेवाले जहाजों के लिए हमेशा खतरा बना रहता था और शायद इसीलिए काफी समय तक यह जहाजी लुटेरों का गढ़ बना रहा। यह द्वीप एक तरह से मिस्र का प्रवेश-द्वार था, लेकिन काफी समय तक यहां पर कोई मजबूत बन्दरगाह या नगर स्थापित नहीं किया जा सका। इसी जगह से करीब एक मील दूर मिस्र का एक छोटा-सा कस्बा रैकोटिस था और इसी कस्बे से थोड़ा आगे मैरियोटिस नाम की एक बहुत बड़ी झील थी। बहुत पुराने जमाने में रैकोटिस में मिस्र निवासियों का एक मन्दिर बना हुआ था और मिस्र के राजाओं ने वहां पर एक सैनिक टुकड़ी भी छोड़ रखी थी, जिससे विदेशियों को रोका जा सके। सिकन्दर से पहले तक यह द्वीप दुनिया के नक्शे में कोई खास महत्त्व नहीं रखता था। ३३२ ई० पू० में सिकन्दर महान् की सेनाओं ने मिस्र को जीत लिया और इस तरह मिस्र मक्दूनिया राज्य का एक हिस्सा बन गया। हालांकि यूनान का साम्राज्य सिकन्दर ने पूरी दुनिया में फैला दिया था, फिर भी तब तक इस साम्राज्य की

कोई अच्छी राजधानी नहीं थी। सिकन्दर की यह इच्छा थी कि वह अपने साम्राज्य की एक विशाल राजधानी बनाए।

एक रात को सिकन्दर महान् को एक सपना दिखाई दिया। सपने में सिकन्दर ने देखा कि एक बूढ़ा आदमी न जाने कहां से उसके सामने आकर खड़ा हो गया है। सिकन्दर ने उससे पूछा, "तुम कौन हो?"

बूढ़ा आदमी—मुझे भगवान् ने तुम्हारी मदद के लिए भेजा है। आजकल तुम अपनी राजधानी बनाने की फिक्र में रहते हो। भगवान् ने कहा है कि इस काम में मैं तुम्हारी मदद करूं।

सिकन्दर—यह बात तो सही है कि मैं अपने राज्य की एक अनोखी राजधानी बनाने की फिक्र में हूं, लेकिन यह समझ में नहीं आ रहा है कि यह राजधानी कहां बनाई जाए। इस काम में आप मेरी क्या मदद कर सकते हैं?

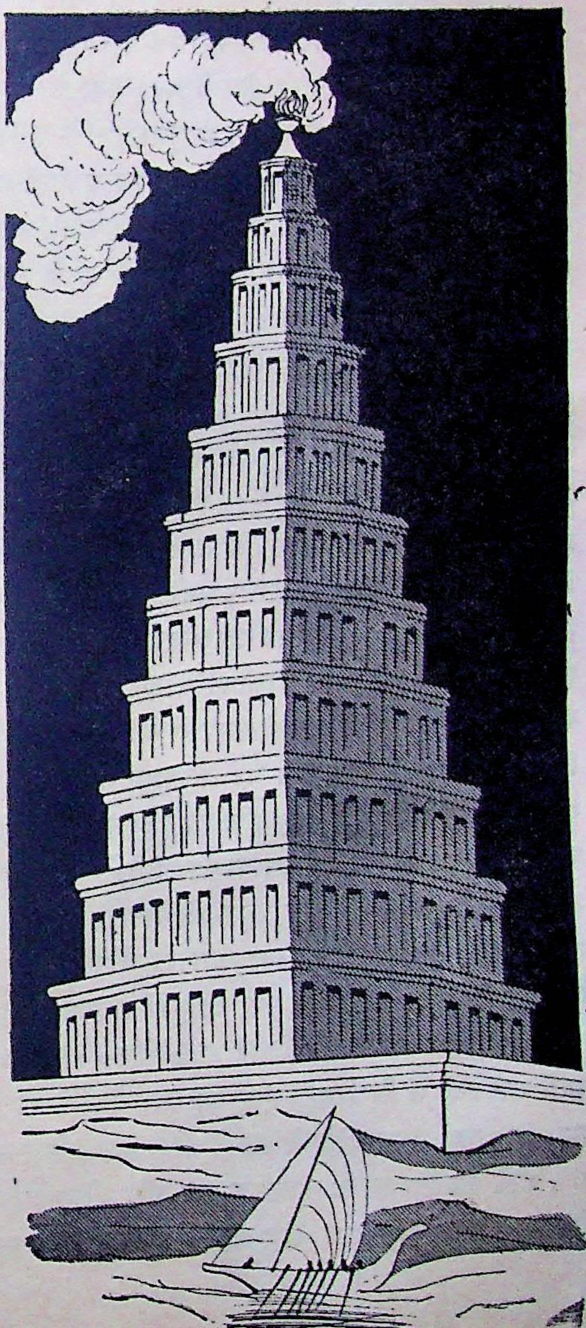
बूढ़ा आदमी—भगवान् की यह इच्छा है कि तुम अपनी राजधानी मिस्र के रैकोटिस कस्बे के पास ही बनाओ।

सपने में भगवान् द्वारा भेजे गए उस बूढ़े आदमी से सिकन्दर इतनी ही बात कर पाया था कि उसकी आंखें खुल गईं। उसने यह निश्चय किया कि वह उस बूढ़े आदमी द्वारा बताई गई जगह पर ही अपनी राजधानी बनाएगा। उसने इस बारे में अपने सेनापतियों की भी सलाह ली। असल में यह द्वीप राजधानी बनाने लायक ही था, क्योंकि समुद्र और झील के बीच में स्थित यह द्वीप प्राकृतिक रूप से ही बहुत सुरक्षित था, फिर राजधानी तो ऐसी जगह पर ही बनाई जाती है जहां पर शत्रु के आक्रमण का डर ही न रहे। इसके अलावा यह मिस्र का दरवाजा था और साथ ही यहां की जलवायु भी बहुत अच्छी थी। सिकन्दर खुद इस द्वीप को देखने गया और इसे देखने के बाद उसने यहां अपनी राजधानी बनाने का फैसला कर लिया।

डिनोक्रेटीस नामक शिल्पकार की देखरेख में मिस्र के द्वीप में सिकन्दर की नई राजधानी बनकर तैयार हुई। वास्तव में ही उस कलाकार ने अपनी सारी कलाकारी को इस नगर के बनाने में लगा दिया था। यह नगर १५ मील के क्षेत्र में फैला हुआ था और इसके चारों ओर दुहरी चारदीवारी बनाई गई थी। इस चारदीवारी के अवशेष आज भी मिस्र के इस द्वीप में मिलते हैं। इस नगर का नाम सिकन्दर के नाम पर सिकन्दरिया रखा गया। जल्दी ही सिकन्दरिया ने बहुत तरक्की की और यह दुनिया में दूसरे नम्बर का नगर बन गया। उस समय दुनिया

का सबसे बड़ा और खुशहाल नगर रोम माना जाता था। सिकन्दरिया व्यापार, संस्कृति और दर्शन का बड़ा भारी केन्द्र बन गया। कहते हैं कि उसमें ३० लाख स्वतन्त्र नागरिक रहते थे, इनके अलावा न जाने कितने दास भी रहते थे।

यह शायद सिकन्दर का दुर्भाग्य ही था कि वह अपनी राजधानी को कभी नहीं देख सका। वह अपने सेनापति क्लियोमीनेस की देखरेख में नगर के निर्माण का काम छोड़कर दूसरे देशों को जीतने निकल पड़ा था। बेबीलोनिया की दलदली और गर्म जलवायु में उसे तेज बुखार हो गया और १३ जून, ३२३ ई० पू० में वहीं पर उसकी मृत्यु हो गई। कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि बेबीलोनिया में उसकी हत्या कर दी गई थी। जिस नगर को वह अपने जीवन में न देख सका और जिसे उसने इतनी तमन्नाओं से बनवाया था, वहां उसकी मौत के बाद उसका शव लाया गया और पूरे सैनिक सम्मान के साथ दफना दिया गया।



सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसका विशाल साम्राज्य उसके सेनापतियों में बंट गया। अन्त में मिस्र के राजा प्टोलेमी ने सिकन्दरिया को अपने अधीन कर लिया। यह वही मिस्र का राजा था, जिसने रोडस द्वीप में मक्दूनिया के राजा डिमिट्रियस की सेनाओं को हराया था और इस तरह रोडसवासियों को यूनानियों के अधीन होने से बचा लिया था। इसी राजा ने सिकन्दरिया में वह विशाल प्रकाश-स्तम्भ बनवाने का काम शुरू किया, जो बाद में संसार के सात आश्चर्यों की गिनती में आया। लेकिन वह अपने राज्य-काल में ही इस प्रकाश-स्तम्भ को पूरा न करवा सका और बाद में उसके लड़के फिलाडेलफस ने २८५ से २४७ ई० पू० में इसे बनवाकर पूरा किया।

यह प्रकाश-स्तम्भ द्वीप के पूर्वी किनारे पर बनवाया गया था, जिससे यह समुद्र में आनेवाले जहाजों का मार्गदर्शन कर सके। इसे उस जमाने के मशहूर-भवन-निर्माता सोस्ट्रैटस ने बनाया था। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि इसे सिकन्दर या उसके सेनापति ने बनवाया था, लेकिन इतिहास में इस बात के सच होने के प्रमाण नहीं मिलते। इतिहास हमें बताता है कि सिकन्दर के बाद बहुत जल्दी ही यूनानियों को मिस्र के राजाओं ने यहां से खदेड़ दिया। फिर यूनानी लोग भला इस प्रकाश-स्तम्भ को कब बनवाते। सिकन्दर का नाम इसके साथ जोड़नेवालों ने एक कपोलकल्पित कहानी भी गढ़ ली थी। इस कहानी के अनुसार सिकन्दर ने इसे बनवाने से पहले ग्रेनाइट, सोना, चांदी, तांबा, कांच और लोहा आदि धातुएं समुद्र में जांच करने के लिए फेंकी थीं। जब इन धातुओं को निकालकर उनकी जांच की गई तो पाया गया कि कांच को छोड़कर बाकी सभी धातुएं खराब हो गई थीं। इसीलिए कांच को इस स्तम्भ की नींव के लिए चुना गया। कांच के एक मजबूत चबूतरे पर ही यह बनाया गया। लेकिन बाद के तथ्यों से यह बात मेल नहीं खाती। असल में इस स्तम्भ की नींव बहुत-सी धातुओं से पुख्ता की गई थी। यह स्तम्भ एक बहुत मजबूत सफेद पत्थर का बनाया गया था और इसके जोड़ों को इस होशियारी से मिलाया गया था कि ऐसा लगता था कि यह पूरा स्तम्भ एक पत्थर को काटकर बनाया गया है।

इस स्तम्भ की ऊंचाई ४०० से ६०० फुट के बीच में मानी जाती है। दुनिया के सातों आश्चर्यों में सिर्फ यही ऐसा था जो लोगों के रोजमर्रा के इस्तेमाल के लिए बनवाया गया था। यह स्तम्भ नीचे से काफी चौड़ा था, लेकिन यह ऊपर को संकरा होता चला गया था। नीचे का हिस्सा छः कोणों का था और बीच का चौकोर था। सबसे ऊपर का हिस्सा गोल था। यह पूरा स्तम्भ पांच खंडों में बनाया गया था। इसके अन्दर घुमावदार सीढ़ियां

थीं, जिनके द्वारा इसके ऊपरी हिस्से में पहुंचा जा सकता था। रात होने पर इसके ऊपर आग जला दी जाती थी। ऐसा कहा जाता है कि १०० मील की दूरी से भी इस स्तम्भ की रोशनी दिखाई देती थी। इसके ऊपर एक बड़ा कांच भी लगा हुआ था, जो जहाजों को संकेत देने के लिए था। कहते हैं कि इस कांच में शत्रु के दूर से आते हुए जहाज भी दिखाई दे जाते थे और जिन्हें दूर से ही देखकर सचेत हुआ जा सकता था। इस कांच के बारे में बहुत-सी कहानियां मशहूर हैं और कुछ लोग तो इसे ही एक महान् आश्चर्य मानते थे। कहते हैं कि मिस्र के पुराने कस्बे रैकोटिस में एक बहुत बड़ा कांच था, उसीके आधार पर स्तम्भ के ऊपर लगा हुआ यह कांच बनाया गया था। यह इतना बड़ा था कि एक बार जब अरबों ने इसे स्तम्भ पर से उतार लिया था तो वे फिर इसे वहां लगाने में कामयाब न हो सके। ऐसा अन्दाजा लगाया जाता है कि यह कांच एक लैंस की तरह का बनाया गया होगा। कहते हैं कि इस कांच के अन्दर काफी दूरी पर बसे हुए नगर कांसटैनटिनोपल की हर गतिविधि को साफ-साफ देखा जा सकता था। और जब दूर से ही कोई हमलावर सिकन्दरिया पर हमला करने आता दिखाई देता था तो इस कांच को इस तरह घुमाया जाता था कि जिससे सूर्य की किरणें हमलावरों के जहाजों पर पड़ने लगती थीं और वे रास्ते में ही जलकर राख हो जाते थे।

इस स्तम्भ पर नीचे की तरफ एक शिलालेख लगा हुआ था, जिसपर लिखा था कि मिस्र के राजा प्टोलेमी ने इसे जहाजों के मार्गदर्शन के लिए बनवाया। इस बारे में एक किंवदंती यह भी है कि जब सोस्ट्रैटस ने इसे बनाकर पूरा किया तो उसने संगमरमर के पत्थर पर इसके निर्माता की जगह अपना नाम खोद दिया और बाद में इस खुदे हुए पर सीमेंट का हल्का-सा प्लस्तर करके राजा प्टोलेमी का नाम खोद दिया। कुछ दिनों बाद राजा प्टोलेमी का नाम उस प्लस्तर के साथ ही झड़ गया और वहां पर सिर्फ सोस्ट्रैटस का नाम ही उसके निर्माता के रूप में खुदा रह गया। इस स्तम्भ के नीचे के दो खंडों में बहुत-से कमरे बनाए गए थे। कहते हैं कि ये कमरे ३०० से भी ज्यादा थे। इन कमरों के रास्ते इतने टेढ़े-मेढ़े थे कि कोई अनजान आदमी उन्हें नहीं ढूंढ़ सकता था। इन कमरों में से कुछ में तो इस स्तंभ के रखवाले रहते थे और कुछ का इस्तेमाल गोदाम के रूप में किया जाता था। सबसे नीचे के कमरों में सैनिक रहते थे। यह अनुमान लगाया जाता है कि इसके बनने में करीब चालीस लाख रुपये खर्च हुए थे। यह धन तो तब खर्च हुआ था जब कि मजदूरों से मुफ्त में काम लिया जाता था और उन्हें बदले में सिर्फ रोटी और कपड़ा दिया जाता था।

जब यह प्रकाश-स्तम्भ बनकर तैयार हुआ तो यह पूरी दुनिया के लिए एक महान्

आश्चर्य बन गया, क्योंकि इसकी बराबर ऊंचाई की कोई भी इमारत इस समय दुनिया में नहीं थी। आज के जमाने के प्रकाश-स्तम्भों से भी यह ऊंचाई में तीन गुना था। हालांकि, मिस्र के इतिहास में बाद में बहुत-से परिवर्तन हुए, तथापि यह स्तम्भ शताब्दियों तक समुद्र में आने-जाने वाले जहाज़ों का मार्गदर्शन करता रहा। सिकन्दरिया ने काफी तरक्की की लेकिन बाद में रोम की ताकत बढ़ती गई और प्टोलेमियों की ताकत खत्म हो गई। ८० ई० पू० में इसपर रोमन लोगों का अधिकार हो गया। बाद में इस नगर से सीज़र, एण्टोनी और क्लिओपेट्रा के नाम जुड़ गए। इसके सैकड़ों वर्षों बाद, जब रोम की सत्ता का सूर्य अस्त होने लगा तो सिकन्दरिया ईसाइयों के हाथ में पड़ गया। लेकिन तब भी यह स्तम्भ समुद्र पर राज्य करने के लिए और मिस्र के राजाओं का नाम अमर करने के लिए ज्यों का त्यों खड़ा था।

जब मक्का में इस्लाम धर्म के प्रवर्तक मुहम्मद साहब का प्रभाव बढ़ा तो दूर-दूर तक इस्लाम धर्म फैल गया। मुसलमानी सेनाएं जिधर भी निकल जातीं, उधर ही इस्लाम का झंडा गाड़ देतीं। सन् ६४० में एक महान् अरब सेनापति अमर ने इस नगर पर अपना अधिकार कर लिया। उसने अपने खलीफा उमर को लिखा था कि उसने चार हज़ार महलों, चार हज़ार स्नानागारों, चार सौ मन्दिरों और थियेटरों, १२ हज़ार दूकानों और ४० हज़ार यहूदियों वाले नगर सिकन्दरिया को अपने कब्ज़े में कर लिया है। सिकन्दरिया का महान् पुस्तकालय थोड़ा-बहुत तो सीज़र के हमले के समय ही नष्ट हो गया था, लेकिन फिर भी इसकी सात लाख किताबों में से दो लाख किताबें अभी तक सुरक्षित थीं। अमर ने कहा कि "इन पुरानी किताबों की कोई ज़रूरत अब नहीं है, अब तो दुनिया का धर्म इस्लाम है और वही सबको मानना होगा।" उसने हुक्म देकर पुस्तकालय की सभी किताबें नगर के चार हज़ार स्नानागारों का पानी गर्म करवाने के लिए जला डालीं। कहते हैं कि इन किताबों ने छः महीने तक इन स्नानागारों में ईंधन की पूर्ति की थी।

अरबों के ज़माने में भी प्रकाश-स्तम्भ अपनी जगह खड़ा रहा और उन्होंने इसके साथ बहुत-सी मनगढंत कहानियां जोड़ लीं। अरबों के मुताबिक इस स्तम्भ पर कांसे की दो विशाल मूर्तियां भी थीं। सबेरे को सूरज के निकलते ही इन मूर्तियों में से एक का हाथ ऊपर उठ जाता था और यह सारे दिन ऊपर ही उठा रहता था। शाम को जब सूरज छिप जाता था तभी यह हाथ नीचे आता था। दूसरी मूर्ति इससे भी ज्यादा चमत्कारपूर्ण थी। यह शान्ति के दिनों में चुपचाप खड़ी रहती थी, लेकिन जब कभी कोई शत्रु नगर पर हमला करने

के लिए आता था तो उस शत्रु को बहुत दूर से ही देखकर यह अपना एक हाथ उस दिशा में उठा लेती थी जिधर से शत्रु आता था। जब शत्रु पास आ जाता था तो यह मूर्ति इतनी जोर से चीखती थी कि मीलों दूर तक उसकी आवाज लोग सुन सकते थे और शत्रु का मुकाबला करने के लिए तैयार हो सकते थे। यह कहानी बिलकुल मनगढंत मालूम देती है, क्योंकि इस बात का कोई सबूत नहीं मिलता कि कभी इस स्तम्भ के ऊपर दो मूर्तियां भी थीं। अरब लोगों के किस्से-कहानियों में इस बात का जिक्र भी मिलता है कि एक बार यूनानी लोगों ने अपने जहाजी बेड़े लेकर सिकन्दरिया पर हमला करने के लिए कूंच किया। जब स्तंभ के ऊपर लगी हुई मूर्ति ने शत्रु के जहाजों को पास आते हुए देखा तो वह जोर से चिल्ला पड़ी, जिससे अरब लोग सचेत हो गए। उन्होंने स्तंभ के ऊपर लगे कांच को घुमाकर यूनानियों के जहाजों पर सूर्य की किरणें डालीं और उन्हें जलाकर राख कर दिया। बाद में खलीफा अल-वालिद के समय में यूनान के एक राजा ने इस स्तंभ के ऊपर के हिस्से को बड़ी तरकीब से तोड़ डाला। वह बहुत-सा धन भेंट में लेकर खलीफा के पास पहुंचा और उसे वह धन भेंट करके राजा ने मुस्लिम बनने की इच्छा प्रकट की। खलीफा ने राजा की भेंट स्वीकार कर ली और जल्दी ही उसे अपना बहुत विश्वासपात्र मित्र मानने लगा। इस तरह खलीफा का विश्वास प्राप्त करके राजा ने सीरिया में गड़े हुए धन की झूठी कहानियां उसे सुनाईं। इधर राजा ने अपने कुछ आदमियों को भेजकर सीरिया में कुछ खजाना छिपवा दिया। जब खलीफा ने राजा के कहे मुताबिक सीरिया की खुदाई करवाई तो यूनानियों द्वारा छिपाया हुआ खजाना उसे मिल गया और इस तरह यूनान के राजा पर खलीफा का विश्वास और मजबूत हो गया। अब खलीफा की और धन हासिल करने की इच्छा बढ़ गई। इसपर उसके यूनानी मित्र ने उसे बताया कि सिकन्दरिया के प्रकाश-स्तंभ के नीचे बेशकीमती खजाना गड़ा हुआ है। लालची खलीफा को विश्वास दिलाने के लिए यूनान के राजा ने कुछ मौलवियों को रिश्वत देकर यह कहने को राजी कर लिया कि पुराने ग्रंथों में भी स्तंभ के नीचे खजाना होने का जिक्र मिलता है।

खलीफा ने अपनी सेना सिकन्दरिया भेजकर स्तम्भ का ऊपरी कांच हटवा दिया और जब स्तंभ का आधा हिस्सा तोड़ा जा चुका था, तब खलीफा को इस बात का पता चल गया कि यूनान के राजा ने किस तरह उसे चालाकी से बेवकूफ बनाया था। इस बात के पता चलते ही स्तंभ तोड़ने का काम रोक दिया गया। जब यूनानी राजा की खोज की गई तो पता चला कि वह पहले ही भागकर अरबों की सीमा से बाहर चला गया था। तब अरबों ने ईंटों द्वारा इस स्तंभ को फिर से बनवाने की कोशिश की, लेकिन यह अपने पहले वाले रूप में फिर कभी

न आ सका। उन्होंने इसके ऊपर के कांच को भी फिर से लगाने की कोशिशें कीं, लेकिन कांच इतना भारी था कि वे उसे ऊपर न लगा सके और कहते हैं कि यह कांच नीचे गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गया।

अरब लोगों की समुद्री सेना बहुत कम थी और उनके जहाज़ भी थोड़े ही थे। इसी कारण अब उनके लिए प्रकाश-स्तम्भ का कोई महत्त्व नहीं रह गया था, क्योंकि अब दूर से ही दुश्मनों का पता लगाने वाला कांच तो उसके ऊपर रहा ही नहीं था। सन् ८७५ में अरबों ने इसके ऊपर लकड़ी का मंच बनवा दिया, जिसपर खड़े होकर मौलवी लोगों को प्रार्थना करने के लिए बुलाया करते थे। यह स्तम्भ चूंकि एक मीनार की तरह का था, इसलिए बाद में जहां भी मुस्लिमों की मस्जिदें बनवाई गईं वहां पर उन मस्जिदों के ऊपर इस तरह की मीनार-सी बनवाई जाने लगीं। आज भी मस्जिदों पर इस तरह की मीनार बनवाने का रिवाज़ प्रचलित है। असल में मस्जिदों की ये मीनारें सिकन्दरिया के प्रकाश-स्तम्भ की ही याद दिलाती हैं। लेकिन इस सब तोड़-फोड़ में यह स्तम्भ बहुत कमज़ोर पड़ गया था। तेज़ समुद्री हवाओं ने इसके ऊपर अरबों द्वारा बनवाए गए लकड़ी के मंच को उड़ा दिया। बाद में २८ दिसम्बर, ९५५ ई० में एक भूचाल ने इसके ऊपरी हिस्से को गिरा दिया। ९६९ ई० में मिस्र में एक नया नगर काहिरा बसाया गया और उसके बाद से सिकन्दरिया का महत्त्व कम होता चला गया।

सन् ११८२ ई० में, जब कि स्तम्भ का आधा निचला हिस्सा ज्यों का त्यों बना हुआ था, इसके ऊपर एक मस्जिद बनवा दी गई, जिसमें बैठकर ठण्डी-ठण्डी समुद्री हवा के बीच अरब लोग अपनी पूजा करते थे। १३७५ में सिकन्दरिया में फिर एक भयानक भूचाल आया और अब प्रकाश-स्तम्भ का सिर्फ निचला हिस्सा ही बचा रह गया, इसके ऊपर बनी मस्जिद को भी इस भूचाल ने खत्म कर डाला। धीरे-धीरे अपने ज़माने का ही नहीं वरन युगों से चलता आया यह महान् प्रकाश-स्तम्भ खण्डहरों में बदल गया। सन् १४९८ में जब कि अफ्रीका से भारत का रास्ता खोजा गया, और जहाज़ उस नये रास्ते से होकर गुज़रने लगे तो इस स्थान का महत्त्व बिलकुल ही खत्म हो गया। धीरे-धीरे सिकन्दरिया भी उजाड़ होता चला गया और स्तम्भ के अवशेष तक गायब हो गए।

इस प्रकाश-स्तम्भ के अवशेष खोजने की बहुत कोशिशें की गईं, लेकिन सब बेकार गईं। आज तो वहां एक हाल का ही बना हुआ प्रकाश-स्तम्भ खड़ा हुआ है लेकिन यह उस पुराने प्रकाश-स्तम्भ के मुकाबले कुछ भी नहीं है, जो कभी दुनिया-भर के लिए एक महान् आश्चर्य बना हुआ था!

●●●

किशोरोपयोगी साहित्य

रोचक कहानियां

सूझ-बूझ की कहानियां	१·००	चोर पकड़ा गया	१·००
बीरबल की कहानियां	१·००	निराला जानवर	१·००
सरल पंचतन्त्र	१·००	सरल हितोपदेश	१·२५
सिंदबाद	१·००	अलीबाबा और चालीस चोर	१·००
शेक्सपियर की कहानियां	२·५०	नानी की कहानियां	१·५०
जानने की कहानियां	२·००	हमारा घर	२·००
दूर देश की कहानियां	१·५०	जंगल के रहस्य	१·५०
१८५७ की कहानियां	१·५०	पारस	१·५०
आविष्कारों की कहानियां	१·२५	सच्ची कहानियां	१·२५
सरल रामायण	१·२५	सरल महाभारत	१·५०
करुणा की कहानियां	१·००	साहस के पुतले	१·००
रसीली कहानियां	०·७५	गुलीवर की कहानी	०·७५
फूलों का गुच्छा	०·५०	मानव की कहानी	१·५०

ज्ञानवर्धक पुस्तकें

हमारे त्योहार	१·००	अच्छी आदतें	१·००
आदमी	१·००	आओ सरकस देखें	१·००
चिड़ियाघर	१·००	चांद का सफर	१·००
हिन्दुस्तान हमारा	२·००	हम एक हैं	१·५०
सत्य का पुजारी	१·००	अशोक चक्र	०·७५
अच्छे बनो	०·७५	गांधी जी से क्या सीखें	१·००
नया समाज	१·००	बापू से सीखो	०·७५

राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली,

द्वारा प्रकाशित